मूल्य: ₹30

नवम्बर-दिसम्बर 2019

आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

फल फूल

www.icar.org.in

दुनिया भर में फैल रही केसर की महक

विश्व के सबसे महंगे मसालों में शुमार केसर की वैश्विक स्तर पर मांग में भारी वृद्धि हो रही है। उद्योग मंत्रालय के तहत कार्यरत ट्रेड प्रमोशन काउंसिल ऑफ इंडिया की हालिया जारी रिपोर्ट के अनुसार विश्व में केसर का निर्यात 2014-2018 के बीच 14.55 प्रतिशत की दर से बढ़ा है। ईरान के बाद, भारत केसर का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। केसर निर्यातक के रूप में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की रैंकिंग 12वें स्थान पर है। ईरान केसर से प्रतिवर्ष 51 बिलियन अमेरिकी डॉलर का राजस्व अर्जित करने वाला प्रमुख निर्यातक देश है। स्पेन, ईरानी केसर का प्रमुख आयातक देश है।

मसालों के राजा के तौर पर मशहूर केसर दुनिया के सबसे प्रतिष्ठित और दुर्लभ कृषि उत्पादों में से एक है। इसकी खेती सबसे पहले यूनान में शुरू हुई थी। माना जाता है कि मसालों के स्रोत के रूप में इसकी खेती लगभग 3,500 वर्षों से भारत समेत दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में की जा रही है। केसर को अरबी भाषा में 'जाफरान' कहते हैं, जिसका अर्थ है 'पीला होना'। वर्तमान में केसर की खेती ईरान, भारत, अफगानिस्तान, स्पेन, ग्रीस, इटली, तुर्की, फ्रांस, स्विट्जरलैंड, इजरायल, अजरबैजान, चीन, मिस्र, यूएई, जापान, इराक और ऑस्ट्रेलिया में की जा रही है।

बाजार में लाखों रुपये किलो बिकता है केसर

केसर, विश्व का सबसे कीमती पौधा है। इसकी खेती भारत में जम्मू के किश्तवाड़ और कश्मीर के पंपोर क्षेत्रों में ज्यादातर की जाती है। यहां के लोगों के लिए यह वरदान है। इसके फूलों से जो केसर मिलती है उसकी कीमत बाजार में लगभग एक से दो लाख रुपये किलो होती है। यहां का केसर हल्का, पतला, लाल रंग, कमल की तरह सुन्दर और गंधयुक्त होता है। कश्मीरी मोंगरा किस्म की केसर सर्वोत्तम मानी गई है। एक समय था जब कश्मीर का केसर विश्व बाजार में श्रेष्ठतम माना जाता था।

गुणकारी है केसर

केसर के फूल

विश्व में सूखे केसर का कुल उत्पादन लगभग 325 टन प्रतिवर्ष है। इसका 90 प्रतिशत से अधिक उत्पादन अकेले ईरान करता है। वहां के खुरासान प्रांत में 92 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र में ईरानी केसर की खेती की जाती है। भारत में केसर की खेती विशेष रूप से जम्मू और कश्मीर में अब तक की जाती रही है। हाल ही में हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में केसर की खेती के कुछ उदाहरण सामने आए हैं। वजन के हिसाब से दुनिया के सबसे महंगे मसालों में से एक केसर विश्व स्तर पर प्रति ग्राम में बेचा जाता है।

केसर, क्रोकस सैटिवस पौधे के सूखे वर्तिकाग्र से प्राप्त किया जाता है। यह एक प्रकन्दीय और चिरस्थाई पौधा है, जिसके घनकंद की ऊंचाई 15-20 सें.मी. होती है। इसमें 6 से 10 पत्ते होते हैं। इसमें 2.5-3.2 सें.मी. की वर्तिका शाखाएं और 3.5-5 सें.मी. परिदल पुंज सहित फांक वाले बैंगनी रंग के एक या दो फूल खिलते हैं। वर्तिकाग्र चमकीले लाल होते हैं। फूल घनकंद से सीधे उग आते हैं। फूल से त्रि-पिण्डक वर्तिका कलिकाओं सहित व्यावसायिक महत्व वाला केसर बनता है। केसर मूल रूप से दक्षिणी यूरोप का पौधा माना जाता है। यह उपोष्ण जलवायु में अच्छी तरह पनपता है। हल्की अम्लीय, दोमट और रेतीली मृदा केसर की खेती के लिए उपयुक्त है। इसका संपूर्ण फूल प्रयोग होता है। इसकी पंखुड़ियां सब्जी के रूप में उपयोग की जाती हैं और डंठल पशुओं के चारे के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं।

केसर उपयोग

केसर अपने रंगों और खुशबू के लिए काफी लोकप्रिय है। इसका उपयोग विभिन्न पकवानों को स्वादिष्ट बनाने में किया जाता है। ब्रेड, केक, मिठाइयों और मुगलई पकवानों में इसका प्रयोग होता है। सौंदर्य प्रसाधनों में भी केसर प्रयुक्त होता है। औषधि के रूप में इसका व्यापक उपयोग है। आयुर्वेद, चीनी एवं तिब्बती औषधियों में इसकी बहुत अधिक उपयोगिता है। केसर के एक वर्तिकाग्र का वजन लगभग 2 मि.ग्रा. होता है और औसतन प्रत्येक फूल में तीन वर्तिकाग्र होते हैं। इसलिए एक कि.ग्रा. केसर का उत्पादन करने के लिए लगभग 1,50,000 फूलों को एक-एक करके चुनना पड़ता है।

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की
लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष : 40, अंक : 6

नवंबर-दिसंबर 2019

संपादन सलाहकार समिति

1. **डा. अशोक कुमार सिंह** — **अध्यक्ष**
   उप-महानिदेशक (कृषि विस्तार)
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. **डा. सतेन्द्र कुमार सिंह** — **सदस्य**
   परियोजना निदेशक
   भाकृअनुप-कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
   भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. **डा. आर.सी. गौतम** — **सदस्य**
   पूर्व डीन
   भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. **डा. एस.के. सिंह** — **सदस्य**
   निदेशक
   भाकृअनुप-राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. **डा. वाई.पी.एस. डबास** — **सदस्य**
   निदेशक (प्रसार)
   जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर
6. **श्री सेठपाल सिंह** — **सदस्य**
   प्रगतिशील किसान
7. **श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह** — **सदस्य**
   कृषि पत्रकार
8. **श्री अशोक सिंह** — **सदस्य सचिव**
   प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक : **अशोक सिंह**

संपादन सहयोग : **सुनीता अरोड़ा**

प्रधान प्रोडक्शन अधिकारी : **डा. वीरेन्द्र कुमार भारती**
स. मुख्य तकनीकी अधिकारी : **अशोक शास्त्री**

लेआउट डिजाइन
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
अशोक शास्त्री

व्यवसाय सम्पर्क सूत्र
सुनील कुमार जोशी
व्यवसाय प्रबंधक
दूरभाष: 011-25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली-12
एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00
E-mail : phalphul@gmail.com

विषय सूची

संपादकीय **हाई टेक बागवानी की ओर**–अशोक सिंह

3 **मुनाफा**

पत्तागोभी की खेती है फायदेमंद
ऋषिपाल, अरविन्द कुमार **और** राजेन्द्र सिंह

7 **घर की बगिया**

न्यूट्री किचन गार्डन से लें पोषक फल और सब्जियां
सत्यप्रिय, प्रेमलता सिंह, रवि शंकर, शिवानी सिंह, विनीता यादव **और** चेतना नागर

10 **विशेष**

उपयोगी है खिरनी
जितेन्द्र सिंह **और** कल्पना चौधरी

13 **सुगंध**

गुलाब के मूल्यवर्धक उत्पाद
अस्मिता, नीतू कुमारी, सतवीर सिंह सिंधु **और** मारकंडे सिंह

16 **औषधीय पादप**

पुदीने की उन्नत खेती
चंदन कुमार, मोती लाल मीणा **और** धीरज सिंह

18 **बचाव**

आलू का शत्रु है कवचधारी सूत्रकृमि
आरती बैरवा, संजीव शर्मा, ई.पी. वेंकटासलम, प्रियंक हनुमान महात्रे **और** एस.के. चक्रबर्ती

21 **रोकथाम**

बैंगन में कीट एवं रोग प्रबंधन
दीपक मौर्य **और** तीथार्थ चट्टोपाध्याय

23 **वैज्ञानिक खेती**

हिमाचल प्रदेश में बंदगोभी का बीजोत्पादन
सीमा ठाकुर, राजेश ठाकुर **और** देविंदर कुमार मेहता

26 **प्रसंस्करण**

जामुन से तैयार करें मूल्यवर्धित उत्पाद
प्रेरणा नाथ, एस.जे. काले **और** राम रोशन शर्मा

40 **यंत्र**

आलू के लिए उपयोगी कृषि उपकरण
देवेश कुमार, एच.एल. कुशवाहा **और** आदर्श कुमार

30 **फायदा**

करौंदे से लें दोहरा लाभ
महेश चौधरी, अनोप कुमारी **और** रवि कुमार मीणा

44 **तकनीकी**

अर्धशुष्क क्षेत्रों में जामुन की वैज्ञानिक खेती
संजय सिंह, ए.के. सिंह, डी.एस. मिश्रा **और** पी.एल. सरोज

35 **आमदनी**

शुष्क क्षेत्रों में बेर की बागवानी
विष्णु के सोलंकी

48 **जानकारी**

नवंबर-दिसंबर में बागों के प्रमुख कार्यकलाप
राम रोशन शर्मा, हरे कृष्णा, स्वाति शर्मा **और** विजय राकेश रेड्डी

आवरण-II **कुछ अलग**

दुनिया भर में फैल रही केसर की महक

37 **सुधार**

पुराने बागों का जीर्णोद्धार
मनु त्यागी, नवप्रेम सिंह **और** बिक्रमजीत सिंह

आवरण-III **उपलब्धि**

देश में पैदा होगी लाल भिंडी

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं, उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप-डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों-कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें।

संपादकीय

हाई टेक बागवानी की ओर

यह सही है कि भारत का नाम विश्व के शीर्ष फल उत्पादक देशों में शुमार किया जाता है। इस वास्तविकता को भी नहीं नकारा जा सकता है कि कई फलों का सर्वाधिक उत्पादन करने का श्रेय भारत को जाता है। इसके बावजूद अन्य देशों की तुलना में भारतीय बागों की उत्पादकता कहीं कम है और इसे बढ़ाए जाने की जरूरत है। इसके सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारणों में बागवानों की कमजोर आर्थिक स्थिति और बागवानी की नई तकनीकों के प्रति जागरूकता का अभाव होना भी है।

विकसित देशों में खेती के कामकाज में ही नहीं बल्कि बागवानी से जुड़े समस्त कार्यों में भी वैज्ञानिक तौर-तरीकों के साथ उन्नत तकनीकों का भी बड़े पैमाने पर इस्तेमाल किया जाता है। निस्संदेह इस प्रकार की हाई टेक बागवानी में काफी निवेश की जरूरत पड़ती है। कृषि सब्सिडी के नाम पर ऐसे संसाधन उपलब्ध करवाने में इन देशों में सरकार की महत्वपूर्ण भूमिका से भी इंकार नहीं किया जा सकता है। हमारे देश में भी तमाम सरकारी एजेंसियों, बागवानी विभागों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा बागवानों को समुचित ट्रेनिंग देने के साथ उन्नत फल-फूल के पौधे तथा अन्य उपयोगी यंत्रों की उपलब्धता सुनिश्चित करवाने पर ध्यान दिया जा रहा है।

इस क्रम में यह चर्चा भी प्रासंगिक होगी कि विश्व के अन्य देशों में इस्तेमाल की जाने वाली हाई टेक बागवानी से क्या आशय है:

- **इंटरनेट का बढ़ता चलन:** विभिन्न ऐप्स तथा सेंसर की सहायता से पौधों के स्वास्थ्य, जल आवश्यकता, उनके पकने आदि पर निगरानी इंटरनेट के माध्यम से की जाती है। इस तरह मानव श्रम पर कम से कम निर्भरता के अलावा कीटों एवं रोगों की भी समय रहते जानकारी मिल जाती है। यही नहीं फलों के सही समय पर पकने के बारे में भी सेंसर द्वारा प्रेषित सूचनाओं से पता चल जाता है।
- **रोबोट का प्रयोग:** जापान में श्रमिकों की कमी तथा बढ़ती बागवानी लागत की समस्या से बचने के लिए फलों की तुड़ाई में रोबोट का प्रचलन तेजी से बढ़ा है। ये रोबोट आर्टिफिशियल इंटेलीजेंस और कैमरे से लैस होते हैं। ये तस्वीरों के रंग से पके फलों की पहचान कर सकते हैं। रोबोट ऐसे पके फलों की तुड़ाई कर उपयुक्त जगहों पर एकत्रित करते रहते हैं।
- **इनडोर फार्मिंग:** व्यावसायिक फार्मिंग कम्पनियों द्वारा बड़े गोदामों में नियंत्रित दशा में सब्जियों का उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जा रहा है। इनमें सलाद पत्ता, मूली तथा अन्य प्रकार की सब्जियां शामिल हैं।

फल और सब्जियों के व्यावसायिक उत्पादन के अन्य नए हाई टेक ट्रेण्ड्स में सुपर ड्वार्फ सब्जियों और रसभरी सरीखे फलों का उत्पादन, इंडोर गार्डनिंग, रोगमुक्त किस्मों के फलदार पौधों की नई किस्मों आदि का इस क्रम में उल्लेख किया जा सकता है।

भारत में भी इन हाई टेक तकनीकों पर व्यापक स्तर पर काम किया जा रहा है। उम्मीद है कि समय के साथ इन तकनीकों की लागत में कमी आएगी और छोटे बागवान एवं सब्जी-फल उत्पादक इनका प्रयोग कर सकेंगे।

(अशोक सिंह)

मुनाफा

पत्तागोभी की खेती है फायदेमंद

ऋषिपाल[1], अरविन्द कुमार[2] और **राजेन्द्र सिंह[3]**
सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, मेरठ (उत्तर प्रदेश)

गोभीवर्गीय सब्जियों में पत्तागोभी का दूसरा स्थान है। यह लोगों के भोजन का प्रमुख अंग होने के अतिरिक्त किसानों की आय बढ़ाने में मुख्य भूमिका निभाती है। इसमें मुख्य रूप से कैल्शियम, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, विटामिन-ए, सी एवं कोलीन इत्यादि भरपूर मात्रा में होते हैं। आजकल बंदगोभी की खेती सर्दियों में ही नहीं अपितु गर्मी और बरसात के मौसम में भी सफलतापूर्वक की जा रही है। इसके अतिरिक्त इसमें गंधक व लौह तत्व की भरपूर मात्रा पाई जाती है। इसलिए पथरी रोग से पीड़ित व्यक्तियों को इसे नहीं खाने की सलाह दी जाती है।

भारत में सब्जियों की खेती के अंतर्गत बंदगोभी का 0.24 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल है। सब्जियों के उत्पादन में हमारे देश को विश्व में तीसरा स्थान प्राप्त है। गोभीवर्गीय सब्जियों की अहमियत भी कुछ नहीं है। बंदगोभी में कार्बोहाइडेट, विटामिन, खनिज व अन्य पोषक तत्व पाये जाते हैं। ये मानव के लिए बहुत ही लाभदायक होते हैं। बंदगोभी भारत में मुख्यतया सर्दियों में उगायी जाती है, जबकि ग्रीन हाउसों में यह लगभग वर्षभर उगायी जाती है। उत्तरी भारत में इसे पातगोभी-पत्तागोभी अथवा बंदगोभी के नाम से जाना जाता है।

जलवायु

पत्तागोभी मुख्य रूप से शीत ऋतु का पौधा है। इसको ठंडी व नम जलवायु की आवश्यकता होती है। शुष्क जलवायु में डंठल बड़े व हैड छोटे आकार के प्राप्त होते हैं। इसके अंकुरण के लिए मृदा का तापमान 12 से 15^0 सेल्सियस तक उपयुक्त होता है। इससे कम या अधिक तापमान होने पर पौधों की वृद्धि तथा विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। तापमान की कम आवश्यकता होने के कारण ही इसे सर्दियों में उगाया जाता है।

भूमि का चयन एवं तैयारी

पत्तागोभी की खेती के लिए उचित जल निकास के साथ मटियार या दोमट या मटियार दोमट मृदा अधिक उपयोगी होती है। अत्यधिक अम्लीय मृदा इसकी खेती के लिए अनुपयुक्त होती है। भूमि का उचित पी-एच मान 5.5 से 6.5 के मध्य हो, तो पैदावार अच्छी होती है। अधिक अम्लीय हो, तो उसमें चूना 10 से 15 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर दर से उर्वरकों के साथ मिलाकर प्रयोग किया जाता है। पौध रोपण से पूर्व गोबर की सड़ी हुई खाद मिलाकर मिट्टी भुरभुरी कर लें तथा तीन-चार हल या हैरो चलाकर खेत को समतल करके आवश्यकतानुसार छोटी-छोटी क्यारियां बना लेनी चाहिए।

पौध तैयार करना

पत्तागोभी की पौध के लिए 1.0 से 1.25 मीटर चौड़ी, 15 सें.मी. ऊंची व लगभग 7 से 10 मीटर लंबी 15 से 16 क्यारियों की आवश्यकता होती है। क्यारियों की गुड़ाई करके उसमें कम्पोस्ट अथवा गोबर की खाद 10 कि.ग्रा. प्रति वर्ग मीटर की दर से मिलानी चाहिए। खेत में क्यारी तैयार करके 5 से 10 ग्राम फ्यूराडान या थिमेट का प्रयोग करें। इसके साथ ही 5 से 10 ग्राम थीरम, कैप्टॉन या बाविस्टीन दवा कवकनाशी मिलाकर क्यारी को समतल करके बीज बोने के लिए तैयार कर लें। इसके बाद 8 से 10 सें.मी. की दूरी पर 2 से 3 सें.मी. गहरी, नुकीली लकड़ी की मदद से क्यारी में कतारें बना लें। इन कतारों में बीज को शोधित करने के बाद बुआई कर दें। हल्के हाथ की मदद से इन कतारों को पूर्णत: ढक दें तथा सूखी घास की परत पलवार के रूप में क्यारी में बिछा दें। यदि क्यारी में नमी नहीं है तो पलवार के ऊपर से हजारे द्वारा हल्की सिंचाई करें। इस प्रकार प्रत्येक दूसरे-तीसरे दिन सिंचाई करते रहें। बीजों के अंकुरण के बाद पलवार सायं के समय हटायें तथा तुरन्त हल्की सिंचाई कर दें। क्यारी में पत्तागोभी का बीज 7 से 8 दिनों में अंकुरित हो जाता है। क्यारी में उगे हुए पौधों की देखभाल करते रहें। इस प्रकार 30 से 35 दिनों में पौधे रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं।

रोपाई एवं दूरी

पत्तागोभी की पौध 30 से 35 दिनों में तैयार हो जाती है। खेत में 50 सें.मी. की दूरी पर कतारें बनाकर उन पर 50 सें.मी. की दूरी पर पौधों की रोपाई सायं के समय करनी चाहिए। कम बढ़ने वाली किस्मों का 45×45 सें.मी. की दूरी पर तथा अधिक बढ़ने वाली प्रजातियों का 60×60 सें.मी. की दूरी पर प्रतिरोपण कर सकते हैं।

सिंचाई

पौधों की रोपाई करने के बाद तुरन्त हल्की सिंचाई करनी चाहिए। पुन: प्रतिरोपण

[1]प्रक्षेत्र सहायक; [2]सह-निदेशक/सह-प्राध्यापक, उद्यान अनुसंधान (उद्यान विभाग); [3]प्राध्यापक/प्रभारी, जैविक नियंत्रण प्रयोगशाला (कीट विज्ञान विभाग)

पोषक तत्वों से भरपूर पत्तागोभी

एक सप्ताह के भीतर अवश्य ही कर देना चाहिए अन्यथा पैदावार प्रति इकाई घट जाती है। प्रतिरोपण के पश्चात तुरन्त सिंचाई करें तथा समय से पौधों की रोपाई कर दें।

खरपतवार नियंत्रण एवं अंत:सस्य क्रियाएं

पत्तागोभी में पौध रोपण से लेकर तैयार होने तक कई प्रकार के खरपतवार उगते हैं। दो या तीन निराई-गुड़ाई से खरपतवार की रोकथाम हो जाती है। इसमें खरपतवारनाशी का प्रयोग काफी लाभप्रद होता है। पेण्डामेथालिन 3.3 लीटर को 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर का छिड़काव रोपाई से पूर्व करने से काफी लाभ होता है।

पत्तागोभी के प्रमुख कीट

पत्तागोभी की तिल्ली

इस कीट की वयस्क तिल्लियां सफेद रंग की होती हैं। ये अंडे से निकलकर इल्लियां बड़े पौधों के शीर्ष के आसपास वाले पत्तों की शिराओं को छोड़कर सभी भागों का खा जाती हैं, परिणामस्वरूप पौधे लगभग पूरी तरह से नष्ट हो जाते हैं।

पत्तागोभी की तिल्लियां

रोकथाम

- फसल की बढ़वार की अवस्था में नीम के अर्क (एन.एस.के.ई.) के 5 प्रतिशत घोल का 2-3 बार छिड़काव करने पर कीटों के प्रकोप में कमी आ जाती है। छिड़काव दोपहर बाद करना चाहिए।
- उपरोक्त नियंत्रण अपनाने के बाद भी यदि कीटों की संख्या अधिक हो तो स्पाइनोसैड (3 मि.ली./10 लीटर पानी) या इमामेक्टिन बेन्जोएट (3 ग्राम/10 लीटर पानी) या फिप्रोनिल (2 मि.ली./लीटर पानी) या क्लोरेन्ट्रेनिप्रोले (1 मि.ली./10 लीटर पानी) का प्रयोग करें।

पत्तागोभी का अर्धकुंडलक कीट

इस कीट का वयस्क पतंगा भूरा होता है। इस कीट की इल्लियां ही क्षति पहुंचाती हैं। ये बड़ी संख्या में पौधघर एवं खेतों में

पत्तागोभी का अर्धकुंडलक कीट

पत्तागोभी की फसल

दिखाई देती हैं। ये पत्तियों के हरे भाग को खा जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप पत्तियों पर केवल शिराएं ही शेष रह जाती हैं।

रोकथाम

- फसल की बढ़वार की अवस्था में नीम के अर्क (एन.एस.के.ई.) के 5 प्रतिशत घोल का 2-3 बार प्रयोग करें। छिड़काव दोपहर बाद करना चाहिए।
- उपरोक्त नियंत्रण अपनाने के बाद भी यदि कीटों की संख्या अधिक हो तो स्पाइनोसैड (3 मि.ली./10 लीटर पानी) या इमामेक्टिन बेंजोएट (3 ग्राम/10 लीटर पानी) या फिप्रोनिल (2 मि.ली./लीटर पानी) का प्रयोग करें।।

पत्तागोभी का एफिड

- यह पत्तागोभी का प्रमुख कीट है, जिसे चैंपा, माहूं व तेला के नाम से जाना जाता है। यह कीट प्राय: दिसंबर के अंत से मार्च के अंत तक सक्रिय रहता है। माहूं के वयस्क व शिशु दोनों पौधों के विभिन्न भागों से रस चूसकर नुकसान पहुचाते हैं।

एफिड

रोकथाम

- मेटासिस्टॉक्स 25 ई.सी., रोगोर 30 ई.सी. या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की 1 मि.ली मात्रा प्रति लीटर मात्रा को 600-800 लीटर पानी में घोलकर 15 दिनों के अंतराल पर दो छिड़काव करें। यदि फसल में प्राकृतिक शत्रु जैसे लेडी बर्ड बीटल, सिरफिड आदि परजीवी पर्याप्त मात्रा में हों तो छिड़काव नहीं करना चाहिए।

पत्तागोभी का तनाबेधक कीट

वयस्क कीट हल्के पीले-भूरे रंग का पतंगा होता है। इस कीट की इल्लियां पत्तियों की शिराओं के साथ-साथ सुरंग बनाती हैं,

पत्तागोभी का पर्ण जाल कीट

इस कीट के वयस्क मध्यम आकार के पतंगे होते हैं। इसकी इल्लियां पौधों को क्षति पहुंचाती हैं। नई निकली हुई इल्लियां एक स्थान पर झुंड में खाती हैं और पत्तियों में छोटे-छोटे अनेक छेद

कर देती हैं। पौधे में केवल पत्तियों की प्रमुख शिराएं धागों द्वारा एक साथ जुड़ी हुई दिखाई देती हैं। बाद की अवस्था में वे बंदगोभी के शीर्षों को खाकर नष्ट कर देती हैं। इस प्रकार फसल पूर्णत: नष्ट हो जाती है।

रोकथाम

- फसल की बढ़वार की अवस्था में नीम के अर्क (एन.एस.के.ई.) के 5 प्रतिशत घोल का 2-3 बार प्रयोग करें। छिड़काव दोपहर बाद करना चाहिए।
- उपरोक्त नियंत्रण अपनाने के बाद भी यदि कीटों की मात्रा अधिक हो तो स्पाइनोसैड (3 मि.ली./10 लीटर पानी) या इमामेक्टिन बेंजोएट (3 ग्राम/10 लीटर पानी) या फिप्रोनिल (2 मि.ली./लीटर पानी) डालें।

तनाबेधक कीट

जो सफेद झिल्लीदार दिखाई देने लगती हैं। इन सुरंगों के अंदर कीट का मल भरा रहता है। ये इल्लियां पत्तियों के वृंतों व तनों में प्रवेश कर क्षति पहुंचाती हैं। छोटे पौधों में इस कीट की इल्लियां मुख्यत: पत्तियों व तनों में प्रवेश कर क्षति पहुंचाती हैं।

रोकथाम

- कीटों के नियंत्रण में 0.05 प्रतिशत मैलाथियान या 0.1 प्रतिशत कार्बोरिल लाभदायक सिद्ध होता है।

हीरक पृष्ठ पतंगा

- कीट के छोटे डिंभक पत्तियों की निचली सतह पर रहते हैं एवं उनमें छोटे-छोटे छिद्र बना देते हैं। तीव्र प्रकोप होने पर छोटे पौधे पूर्णत: पत्तीरहित हो मर जाते हैं। ये बड़े पौधों के शीर्षों में छिद्र बना देते हैं, जिनमें इनका मल भरा रहता है।

हीरक पृष्ठ पतंगा

बीज की मात्रा तथा उपचार

पत्तागोभी का बीज छोटा होता है। इसलिए इसके पौधे पहले पौधशाला में बीज बोकर तैयार किए जाते हैं। एक हैक्टर खेत में 500 से 750 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। संकर किस्मों का बीज 300 से 350 ग्राम पर्याप्त होता है। कवकनाशी दवा थीरम अथवा कैप्टॉन की 2 से 3 ग्राम मात्रा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करके ही बोना चाहिए, जिससे पौधशाला में आर्द्र विगलन जैसे रोगों से पौध को बचाया जा सके।

बीज की बुआई का समय

पत्तागोभी शीतकालीन फसल है इसकी बुआई का सर्वोत्तम समय सितंबर-अक्टूबर तक होता है। बसंत या ग्रीष्म में फसल लेने के लिए बीज सुरक्षित स्थानों, प्लास्टिक घर, कांचघर आदि में दिसंबर-जनवरी में बोया जा सकता है। संकर प्रजातियों को फरवरी मध्य से मई तक बोया जा सकता है।

रोकथाम

- सरसों को जाल फसल के रूप में उगाना चाहिए। इसके लिए पत्तागोभी की प्रत्येक 25 पंक्ति की रोपाई के बाद दूसरी रोपाई के 15 दिनों पूर्व सरसों की एक पंक्ति की बुआई करते हैं, फिर पत्तागोभी की दूसरी पंक्ति की बुआई करते हैं।
- बी.टी. 1 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर का छिड़काव करें।
- अत्यधिक प्रकोप होने पर मैलाथियान 50 ई.सी. के 500 मि.ली. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करें।

पत्तागोभी के मुख्य रोग

मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्ड्यू)

यह रोग पौधशाला में फूल बनने तक कभी भी लग सकता है। सूक्ष्म, पतले बाल जैसे सफेद कवक तन्तु पत्ती की सतह पर दिखते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर जहां कवक तन्तु

मृदुरोमिल आसिता

सारणी : पत्तागोभी की उन्नत प्रजातियां

प्रजातियों का नाम	उपज क्विंटल/हैक्टर	विशेषतायें
अगेती प्रजातियां		
गोल्डन एंकर	350-400	हैड गोल, ठोस आकार, पौधों का रंग हल्का हरा व औसत वजन 1000-1500 ग्राम
प्राइड ऑफ इण्डिया	300-400	हैड रोपाई के 60 से 70 दिनों ठोस, पत्तियों पर हल्का सफेद चूर्ण
चौबटिया अर्ली	300-400	पौधे हल्के पीले, हैड गोल व मध्यम आकार,
पछेती प्रजातियां		
पूसा हैड	400-500	हैड चपटे ठोस, पौधों का रंग हल्का हरा, ठंडे क्षेत्रों में लगभग 110 दिनों में तैयार
ड्रम हैड	350-400	पौधे छोटे, तने हल्के हरे रंग व रोपाई के लगभग 100 दिनों बाद तैयार
पूसा हिल टॉपर	300-400	ठंडे क्षेत्रों के लिए अधिक उपयुक्त
पूसा मुक्ता	450-500	हैड चपटे गोल बड़े आकार, ब्लैक रॉट के प्रतिरोधी
रेड कैबेज	200-250	हैड गोल आकार, काफी लंबे पौधे, छोटे फूल बैंगनी रंग होने के कारण बहुत कम पसंद
संकर प्रजातियां		
हरी रानी गोल	400-500	पत्तियां गहरी हरी नीली, काली से ब्लैक रॉट और पीत रोग की प्रतिरोधक
श्री गणेश गोल		हैड गोल अत्यधिक ठोस, पत्तियों का रंग आकर्षक नीलापन लिए हरा-पीला-रोग के प्रतिरोधी
क्रान्ति	350-400	पौधे शीघ्र बढ़ने वाले, मध्यम ऊंचाई के हैड गोल कठोर तथा छोटे आकार के, पत्तियों का रंग हल्का हरा-पीला, रोग प्रतिरोधकता
उन्नति	800-900	हैड गोल गठीला, औसत वजन 2 से 2.25 कि.ग्रा., डायमण्ड बैक मॉथ सहनशील
बहार	750-850	हैड मध्यम आकार का गठीला गोल, ब्लैक रॉट तथा सॉफ्ट रॉट प्रतिरोधी, पौधे गहरे हरे रंग के जिन पर सफेद पाउडर की परत
प्रगति	650-750	हैड गोल गठीले, बंद सख्त, औसत वजन 800 से 1000 ग्राम, पत्तियों में सफेद उभरी धारियां

दिखते हैं वहीं पत्तियों की ऊपरी सतह पर भूरे नेक्रोटिक धब्बे बनते हैं, जो रोग के तीव्र हो जाने पर आपस में मिलकर बड़े हो जाते हैं।

रोकथाम

- मैन्कोजेब कवकनाशी का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से रोग की प्रारंभिक अवस्था में 6 से 8 दिनों के अंतराल पर पर्णीय छिड़काव करें।
- रिडोमिल कवकनाशी का 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल की दर से रोग की अधिक दशाओं में केवल एक बार छिड़काव करना चाहिए।

अल्टरनेरिया पर्णदाग

अल्टरनेरिया पर्णदाग

अल्टरनेरिया पर्णदाग पत्तागोभी में बाद की अवस्थाओं में निचली पत्तियों में लगता है। इस रोग में पत्तियों पर गोल भूरे धब्बे बनते हैं, जिसमें छल्लेदार रिंग स्पष्ट दिखते हैं। आर्द्रतायुक्त मौसम में इन्हीं धब्बों पर काले बीजाणु बन जाते हैं। पत्तागोभी की ऊपरी पत्तियां संक्रमित हो जाती हैं।

रोकथाम

- शाम के समय क्लोरोथेलोनिल कवकनाशी को 2 ग्राम/लीटर पानी की दर से तथा 0.1 मि.ली. स्टीकर के साथ मिलाकर छिड़काव करें।
- स्वस्थ पौधों से ही बीज का चुनाव करें तथा फली बनने के समय एक बार उपरोक्त दवा या मैन्कोजेब 2.5 ग्राम लीटर की दर से छिड़काव करें।

पौध कमर तोड़

यह रोग पौध का एक प्रमुख रोग है, जो भी सब्जियां पौध से उगाई जाती हैं, उन सब में यह पाया जाता है। इस रोग का प्रकोप अच्छी तरह से प्रबंधित न होने वाली पौधशालाओं में अधिक होता है। इस रोग के लक्षण पौधों पर दो प्रकार से दिखाई देते हैं। एक में तो पौधे जमीन से बाहर निकलने से पहले ही रोगग्रस्त हो जाते हैं और बीज अंकुरित होते ही मर जाते हैं। इससे पौधशाला में पौधों की संख्या में कमी आ जाती है। दूसरे रूप में रोग का संक्रमण पौधे के तने पर होता है तथा तने में विगलन होने से पौधे भूमि की सतह पर लुढ़क कर मर जाते हैं।

रोकथाम

- क्यारियों को बीजाई से 15 से 20 दिनों पहले फार्मालिन 1 भाग और 7 भाग पानी से शोधित करें तथा पॉलीथीन चादरों से ढककर रखें। बीज तभी बोयें जब मृदा से इस दवा का धुआं उठना बंद हो जाये।

तना विगलन रोग

- क्यारियों को मैन्कोजेब 25 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी और कार्बेन्डाजिम 5 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी के घोल से, बीज से पौध निकलने पर रोग के लक्षण देखते ही सींचें।

तना विगलन रोग

प्रभावित पौधों पर हरियाली समाप्त हो जाती है और वे पीले पड़कर गिर जाते हैं। पौधे के तने पर गहरे भूरे रंग की सड़न शुरू हो जाती है और तना अंदर से खोखला हो जाता है एवं इसमें कोयले की तरह काले रंग की आधे से पौने इंच के आकार की टिकियां भर जाती हैं व फूल भी सड़ने लगते हैं।

रोकथाम

- फसल पर फूल बनने से बीज बनने तक 10 से 15 दिनों के अंतराल पर कार्बेन्डाजिम 50 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी और मैन्कोजेब 250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी का छिड़काव करें।

काला सड़न रोग

- रोगग्रस्त पौधों के पत्तों के किनारे पर अंग्रेजी के वी अक्षर के आकार के पीले धब्बे पड़ जाते हैं। समय के साथ ये बढ़कर पत्तों के अधिकतर भाग को घेर लेते हैं। प्रभावित पत्तों की शिराएं गहरे भूरे या काले रंग की हो जाती हैं। तापमान के बदलने से प्रभावित पौधे एक दम सूख जाते हैं। यदि फसल बीज के लिए लगाई गई हो तो रोगाणु का संक्रमण बीज तक भी चला जाता है। अगले वर्ष फसल का बीज रोग को फैलाने का काम करता है।

काला सड़न रोग

खाद तथा उर्वरक

मृदा की उर्वराशक्ति बढ़ाने के लिए 150 से 200 क्विंटल सड़ी हुई गोबर की खाद का उपयोग रोपाई के 30 से 35 दिनों पूर्व खेत में करें। खेत की जुताई करके खाद को भलीभांति मृदा में मिश्रित कर दें तथा 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 60 कि.ग्रा. पोटेशियम तत्व का उपयोग उर्वरक के रूप में करें। इसमें से सम्पूर्ण फॉस्फोरस व पोटाश तथा आधी नाइट्रोजन खेत की तैयारी के समय अंतिम जुताई के साथ देनी चाहिए। शेष आधी नाइट्रोजन को दो भागों में बांटकर एक भाग रोपाई के 25 से 30 दिनों बाद तथा दूसरा भाग 45 से 50 दिनों बाद खड़ी फसल में देना चाहिए। संकर प्रजातियों के लिए उर्वरकों की मात्रा 200 कि.ग्रा नाइट्रोजन और 100 कि.ग्रा. फॉस्फोरस प्रति हैक्टर की दर से देनी चाहिए।

रोकथाम

- 50^0 सेल्सियस पर 30 मिनट तक ऊष्णजल बीजोपचार या स्ट्रैप्टोसाइक्लिन से 1 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी के घोल द्वारा 30 मिनट तक बीजोपचार करें।
- स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 1 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी एवं कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम प्रति लीटर के मिश्रण को 0.5 मि.ली. चिपकने वाले पदार्थ के साथ मिलाकर एक बार प्रयोग करें। पत्तागोभी में *पूसा मुक्ता प्रजाति* इस रोग के लिए अत्यधिक सहनशील है।

कटाई

पत्तागोभी के हैड कल्ले पूरे आकार के हो जाएं और छूने पर ठोस लगें तभी काटना चाहिए। काटने के लिए तेज दरांती, हंसिया अथवा चाकू प्रयोग में लाया जाता है। पत्तागोभी के हैड को काटने का समय प्रजाति के अनुसार मध्य दिसंबर से अप्रैल तक और मैदानी क्षेत्र में मई-जून तक है।

पैदावार

पत्तागोभी की पैदावार प्रजाति की किस्म, क्षेत्र, स्थान, देखरेख, उर्वरता आदि अनेक बातों पर निर्भर करती है। यदि सभी क्रियाएं समय से की जायें तथा पर्याप्त देखरेख व सुरक्षा के उपाय अपनाए जाएं तो अगेती प्रजातियों की औसत पैदावार 500 से 600 क्विंटल प्रति हैक्टर प्राप्त की जा सकती है। उत्तर भारत में औसत पैदावार 250 से 300 क्विंटल प्रति हैक्टर तथा दक्षिण भारत में 150 से 200 क्विंटल प्रति हैक्टर तक आंकी गई है, परंतु वैज्ञानिक ढंग से खेती की जाए तो पैदावार बढ़ाई जा सकती है। ■

न्यूट्री किचन गार्डन से लें पोषक फल और सब्जियां

सत्यप्रिय, प्रेमलता सिंह, रवि शंकर, शिवानी सिंह, विनीता यादव और **चेतना नागर**
कृषि प्रसार संभाग, भाकृअनुप–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012

आज के समय में जहां भरपूर मात्रा में खाद्य पदार्थ उपलब्ध हैं, वहीं कुपोषण जैसी विसंगतियां भी देखी जा रही हैं। ऐसे बदलते परिवेश में पोषणयुक्त आहार बहुत ही जरूरी है। घर के आसपास की भूमि का पूर्ण उपयोग करने के लिए, न्यूट्री किचन गार्डन अच्छा विकल्प है। इससे हमें पौष्टिक एवं सुरक्षित (रसायनमुक्त) भोजन मिलता है। इसके साथ ही यह आय का भी एक अच्छा स्रोत है। कुपोषणमुक्त भारत के प्रयास में न्यूट्री किचन गार्डन महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है। कुपोषण को कम करने के किए भोजन का पोषण से परिपूर्ण होना आवश्यक है। समाज में आय और पोषण के मामले में न्यूट्री किचन गार्डन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। जरूरत है उपयुक्त फसलों और कृषि के एकीकरण की, जो जरूरत एवं स्थान के अनुसार हो। इससे बाजार पर हमारी निर्भरता हटेगी एवं हमें शुद्ध खाद्य भी मिलेगा। इससे हम अपने स्वास्थ्य को बेहतर कर सकते हैं एवं देश को कुपोषण मुक्त बना सकते हैं।

हमारे भारतीय खानपान की शैली में सब्जियां, फल–फूल एवं कंद मूल को विशेष प्राथमिकता दी गई है। शाकाहारियों के दैनिक जीवन में सब्जियां विशेष रूप भूमिका निभाती हैं। सब्जियां खाद्य पदार्थों में पौष्टिक मूल्यों की अच्छी स्रोत हैं। पोषण विशेषज्ञों की आहार अनुशंसा के अनुसार एक संतुलित आहार के लिए प्रतिदिन 85 ग्राम फलों और 300 ग्राम सब्जियों का

समय की मांग है न्यूट्री किचन गार्डन

सेवन करना चाहिए। देश में सब्जियों के उत्पादन का वर्तमान स्तर प्रतिदिन केवल 120 ग्राम सब्जियों की प्रति व्यक्ति खपत है। इस कमी की पूर्ति के लिए न्यूट्री किचन गार्डन एक अच्छा विकल्प है।

न्यूट्री किचन गार्डन आवासीय घरों में पोषक तत्वों से भरपूर फसल (फल, सब्जियां आदि) उगाने को कहते हैं। यह पूरे वर्ष परिवार की खानपान की आवश्यकताओं को पूरा करने

न्यूट्री-किचन किट

में सहायक होता है। यह स्वस्थ और सुरक्षित (रसायनमुक्त) खाद्य पदार्थों के उत्पादन में सहायक है। भारत में दक्षिणी और उत्तर-पूर्वी राज्यों, द्वीप समूहों और कुछ तटीय क्षेत्रों में 'होमगार्डन' बेहद प्रचलित हैं। इस मॉडल में

होम गार्डन

घर को केन्द्र बिंदु मानकर, घर के आसपास की जमीन का उपयोग मौसमी सब्जियां और फल लगाने के लिए किया जाता है। यह मॉडल 'एकीकृत खेती प्रणाली' के अंतर्गत आता है। इसमें भूमि, संसाधन एवं समय के पूर्ण सदुपयोग पर जोर रहता है।

गार्डन का लेआउट

गार्डन का लेआउट और प्रत्येक

खेती की विशेष प्रणालियां

ग्लास हाउस

ग्रीन हाउस जिसे ग्लासहाउस भी कहा जाता है, दीवारों और छत के साथ एक संरचना है, जो मुख्य रूप से पारदर्शी सामग्री, जैसे कांच के बने होते हैं। इसमें पौधों को विनियमित जलवायु स्थितियों की आवश्यकता होती है। एक लघु ग्रीन हाउस को ठंडे फ्रेम के रूप में जाना जाता है। सूरज की रोशनी के संपर्क में आने वाले ग्रीन हाउस का आंतरिक तापमान बाहरी परिवेश से काफी गर्म हो जाता है, जो ठंड के मौसम में इसकी सामग्री की रक्षा करता है। सब्जियों या फूलों के लिए व्यावसायिक ग्लास ग्रीन हाउस उच्च तकनीक उत्पादन की सुविधाएं हैं। ग्रीन हाउस उपकरणों से भरे होते हैं, जिनमें स्क्रीनिंग इंस्टॉलेशन, हीटिंग, कूलिंग, लाइटिंग, और प्लांट ग्रोथ की स्थितियों को अनुकूलित करने के लिए कम्प्यूटर द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

पॉलीहाउस

पॉलीहाउस खेती वर्तमान दिनों में खेती की एक नई और व्यापक रूप से स्वीकार्य विधि है। पॉलीहाउस पॉलीथीन से बनाया जाता है। पॉलीथीन शीट पराबैंगनी किरणों को स्थिर करती है और फसलों में उचित प्रकाश संश्लेषण में मदद करती है। अधिकांशत: इसे सूर्य प्रकाश की उचित प्रविष्टि की अनुमति देने के लिए पूर्व से पश्चिम दिशा में बनाया जाता है।

हाइड्रोपोनिक्स

यह हाइड्रोकल्चर का एक उप समूह है, जो पानी में खनिज पोषक संसाधनों का उपयोग करके मिट्टी के बिना पौधों को बढ़ाने का एक तरीका है। स्थानीय पौधों को केवल खनिज संसाधनों के संपर्क में आने वाली जड़ों के साथ उगाया जा सकता है या जड़ों को एक निष्क्रिय माध्यम, जैसे कि परलाइट या बजरी द्वारा समर्थित किया जा सकता है। हाइड्रोपोनिक सिस्टम में उपयोग किए जाने वाले पोषक तत्व विभिन्न स्रोतों की एक सारणी से आ सकते हैं। इनमें मछली अपशिष्ट, बत्तख खाद या रासायनिक उर्वरकों से उपज शामिल हो सकती है।

सारणी : न्यूट्री किचन गार्डन के लिए उपयुक्त कम अवधि की सब्जियां

फसलें	किस्में	फसल अवधि	फसल उपलब्धता	उपज (कि.ग्रा./10 मीटर)
मेथी	पूसा अर्ली बंचिंग, कसूरी चयन	25-30	जुलाई-फरवरी	8-10
बथुआ (चेनोपॉड)	पूसा बथुआ 1	60-65	नवंबर-फरवरी	20-25
पुदीना	स्थानीय सामग्री	45-55	अगस्त-जुलाई	4-5
चौलाई	पूसा किरण, पूसा कीर्ति, पूसा लाल चौलाई	30-35	मार्च-अक्टूबर	15
धनिया	हिसार आनंद, स्वाति, साधना, सिंधु	35-40	जुलाई-अप्रैल	6-8
हरा प्याज	लंदन ध्वज, अमेरिकी ध्वज, मुसलबर्ग	60-70	दिसंबर-जनवरी	15
बसंत प्याज	पूसा व्हाइट फ्लैट, पूसा व्हाइट राउंड	60	जुलाई-अक्टूबर	15
पालक	पूसा भारती	40-50	अगस्त-सितंबर	12.5
सब्जी सरसों	पूसा साग-1	40-50	सितंबर-अक्टूबर	12
मूली	पूसा मृदुला, पूसा चेतकी	40	अगस्त-सितंबर	17
शलजम	पूसा स्वीटी पूसा चंद्रमा पूसा स्वर्णिमा	40-45 50-55 50-55	अक्टूबर दिसंबर दिसंबर	25 35 30
मटर	पूसा प्रगति	60-65	नवंबर	9
गोभी	स्वर्ण एकड़	60-65	नवंबर	25
ब्रोकली	पूसा केटीएस-1, पालम समृद्धि	60-65	दिसंबर	12

न्यूट्री किचन गार्डन बनाने के महत्वपूर्ण बिंदु

- न्यूट्री किचन गार्डन के लिए घर के पीछे की भूमि या छत का उपयोग कर पाना है संभव
- मौसम के आधार पर फसलों का चयन
- छाया के प्रभाव से बचने के लिए तेजी से बढ़ते फल के पेड़ उत्तर दिशा की तरफ लगाने जरुरी
- तेजी से बढ़ती फसलों के साथ धीमी बढ़ती फसलों के अंतर-स्थान का उपयोग संभव
- जड़ी-बूटी के लिए गमले व डब्बे का प्रयोग

- पत्तेदार, जड़ और कंद सभी तीनों घटकों का प्रयोग
- बीज उत्पादन के लिए जगह रखनी हैं जरूरी
- स्वच्छ खेती और 'रसायनों का न्यूनतम उपयोग' का गुरुमंत्र
- सफाई का विशेष ध्यान रखना है जरुरी
- यदि जरूरत हो तो रोगों व कीटों के लिए (नीम का जैल/4 मि.ली./लीटर पानी) का प्रयोग करना है प्रभावी

किचन गार्डन में विभिन्न पौधे

मौसम के लिए उपयुक्त फसलों का चयन क्षेत्र की कृषि जलवायु स्थितियों पर निर्भर करता है। जलवायु और मौसमी परिवर्तनों के आधार पर लेआउट और फसल उगाने की तैयारी करनी चाहिए। लेआउट में उपयोग की जाने वाली कुछ सामान्य विशेषताएं इस प्रकार हैं, जैसे कि करी पत्ता जैसी सब्जियों को बगीचे के एक तरफ उगाना चाहिए, क्योंकि इन फसलों को हम पूरे वर्ष उगा सकते हैं। सभी तरफ से बाड़ को कांटेदार तार के साथ बनाया जाना चाहिए। गार्डन में कीट और रोग नियंत्रण के लिए स्वच्छ खेती, कीट/रोग प्रभावित संयंत्रों को हटाने, प्रतिरोधी किस्मों का रोपण, जैविक नियंत्रण, जैव-कीटनाशकों का उपयोग या जैव-फंगीसाइड का उपयोग करें।

क्षेत्र का वितरण (लगभग 150 वर्ग मीटर)

- बाड़ द्वारा कवर किया गया शुद्ध क्षेत्र = 6 × 10 = 60 वर्ग मीटर
- छत को अलग करके कवर किया गया शुद्ध क्षेत्र = 0.5 × 3 × 10 = 15 वर्ग मीटर
- समानांतर किनारों से ढका शुद्ध क्षेत्र = 0.5 × 25 × 2 = 25 वर्ग मीटर
- कुकुरबिट्स = 1×25 = 25 मीटर बढ़ने के लिए गड्ढे के लिए चैनल/सीमा
- फलों और अन्य पौधों को रोपण के लिए सीमा = 1 × 25 = 25 मीटर

न्यूट्री किचन गार्डन फल पोषण की आवश्यकता को पूरी करने के लिए एक बहुत ही उपयुक्त विकल्प हैं। ये फल पोषण के साथ-साथ स्वादिष्ट भी होते हैं। यदि पौष्टिक गुणों की समीक्षा की जाए तो आम में कैरोटीन, कार्बोहाइड्रेट और कच्चे फाइबर जैसे पोषक तत्व पाए जाते हैं। केले में कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। अमरूद लौह तत्व, कैल्शियम और विटमिन 'सी' से भरपूर है। पपीते में कैरोटीन की मात्रा अधिक पायी जाती है। नीबू विटामिन 'सी' का अच्छा स्रोत है। ■

न्यूट्री किचन गार्डन के लिए पूसा सब्जी बीज किट

पूसा संस्थान द्वारा विकसित पूसा बीज किट घर के गार्डन के लिए उपयुक्त है। इस किट में मौसम के हिसाब से विभिन्न बीजों को एकत्रित किया जाता है। इसके साथ-साथ इसको लगाने के लिए सही विधि की जानकारी दी जाती है। उच्च गुणवत्ता के ये बीज पूसा संस्थान में मात्र 100 रुपये में मिलते हैं, जिसमें लगभग 10 प्रकार के विभिन्न सब्जियों के बीजों का मिश्रण होता है। यह एटिक में उपलब्ध भी है।

सब्जी की जरूरत पूरी होगी न्यूट्री किचन गार्डन से

उपयोगी है खिरनी

जितेन्द्र सिंह और **कल्पना चौधरी**
फल विज्ञान विभाग, उद्यानिकी एवं वानिकी महाविद्यालय, कृषि विश्वविद्यालय,
कोटा परिसर, झालावाड़-326 023 (राजस्थान)

बागवानी की बात की जाये तो व्यावसायिक खेती में कुछ विशेष फल वृक्षों की ही खेती की जाती है। वर्तमान में कृषि जगत में जैवविविधता संरक्षण एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। यह हमारी खाद्य विविधता के लिए भी जरूरी है। खिरनी, जैवविविधता के संरक्षण में एक अहम कड़ी है। आधुनिक बागवानी में खिरनी जैसे फल वृक्षों के संरक्षण की आवश्यकता है। मात्र कुछ ही फलों की व्यावसायिक खेती से जैवविविधता संकुचित होती जा रही है। भोजन की थाली में भी कुछ ही फलों की उपस्थिति रहती है। खिरनी को प्रमुख फल के रूप में प्रतिस्थापित करने के लिए इसका संरक्षण, प्रवर्धन और बागवानी में संवर्धन आवश्यक है।

खिरनी को स्थानीय भाषा में रायन या रेनिया भी कहते हैं। इसे वानस्पतिक भाषा में *मेनिलकारा हेक्सैन्ड्रा* के नाम से जाना जाता है। हमारे देश में यह शुष्क पर्णपाती वनों में पाया जाने वाला उपयोगी वृक्ष है। खाद्य फल देने के साथ-साथ खिरनी, चीकू की व्यावसायिक खेती के लिए भी आवश्यक है। इसे चीकू के पौधे तैयार करने में बतौर मूलवृन्त प्रयोग किया जाता है।

परिचय

खिरनी, सपोटेसी कुल का पौधा है, यह एक मध्यम ऊंचाई का वृक्ष है। इसकी पत्तियां मोटी गहरे रंग की होती हैं एवं पौधे की छाल भूरे रंग की होती है, जो इसकी वाष्पोत्सर्जन आवश्यकता को कम करती है। छाल में लेटेक्स नलिकायें होती हैं तथा टैनिन भी पाया जाता है। इनकी मौजूदगी के कारण खिरनी का पेड़ शुष्क वातावरण में बड़ी आसानी से जीवित रहता है। इसमें उत्तरी भारत में दिसंबर में फूल आते हैं। फूल, पत्तियों के कक्ष में नयी बढ़वार पर एकल या गुच्छे में आते हैं। इसके पके फल पीले रंग के एवं रसदार होते हैं व अप्रैल-मई में पककर तैयार हो जाते हैं।

उपयोगिता

खिरनी के पके फल कार्बोहइड्रेट के अच्छे स्रोत होते हैं। इसके बीजों में तेल पाया जाता है। छाल से निकाले जाने वाले सत का उपयोग पेड़ एवं पशुओं की आंतों में होने वाले घाव (अल्सर) के उपचार में होता है। खिरनी के फलों, बीजों एवं छाल के रासायनिक संघटन का वर्णन सारणी-1 में दिया गया है।

स्पष्ट है कि खिरनी के फल कार्बोहइड्रेट के उत्तम स्रोत हैं। बीज में पर्याप्त मात्रा में तेल एवं छाल में उपयुक्त मात्रा में टैनिन पाया जाता है। इसके फलों को खाद्य फलों की विविधता से जोड़ा जा सकता है। खिरनी के बीजों से प्राप्त तेल से औद्योगिक महत्व

खिरनी के परिपक्व फल

के तेल का उत्पादन किया जा सकता है। इसकी छाल टैनिन का स्रोत होने के कारण चमड़ा उद्योग के लिए उपयोगी है एवं इसकी लकड़ी दीमक प्रतिरोधी होती है। इसलिए इसका उपयोग तेल मिल में घानी बनाने के लिए, फर्नीचर बनाने में एवं दूसरे कार्यों के लिए किया जाता है।

जलवायु

खिरनी के वृक्ष प्राकृतिक रूप से शुष्क क्षेत्रों के जंगलों में पाए जाते हैं। वैसे यह मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र आदि प्रदेशों में प्राकृतिक वातावरण में उगते हुए देखे जाते हैं। यह आमतौर पर 700 से 1000 मि.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में पाया जाता है। खिरनी का पुराना वृक्ष ठंड प्रतिरोधी होता है। नया पेड़, जो ग्राफ्टिंग से तैयार किया जाता है, ठंड से प्रभावित होता है और पौधे की बढ़वार मंद हो जाती है।

बीज बुआई विधि

बीजों की बुआई पॉलीथीन की थैलियों में की जाती है, क्योंकि पॉलीथीन की थैलियों से पौधों को स्थानांतरित करने में सरलता होती है। पॉलीथीन की थैली की मोटाई 300 गेज होनी चाहिए। इनका आकार 10-25 सें.मी. या अन्य आकार वाले पौधों के अनुसार हो सकता है। इन पॉलीथीन की थैलियों को बीज बोने हेतु उपयुक्त बनाने के लिए पहले थैलियों में नीचे की ओर महीन छिद्र करने चाहिए जिससे आवश्यकता से अधिक पानी बाहर निकल जाए किन्तु मिट्टी न निकल पाए। थैलियों में मिट्टी 2 भाग, बालू 1 भाग, गोबर की खाद 1 भाग तथा पत्ती की खाद 2 भाग का मिश्रण भरना चाहिए। थैलियों में स्वस्थ बीज बोना चाहिए।

खिरनी की पौध

खिरनी के पौधे, बीज शैय्या एवं पॉलीथीन में उगाये जा सकते हैं। बीज शैय्या ऊंचे स्थान पर जहां कि पानी रुकने की संभावना न हो, भूमि सतह से 15-20 सें.मी. ऊपर तैयार करनी चाहिए। बीज शैय्या तैयार करने से पहले भूमि की जुताई करके मिट्टी अच्छी तरह भुरभुरी बना लेनी चाहिए। बीज शैय्या तैयार कर इनमें 15 कि.ग्रा. अच्छी तरह सड़ी-गली हुई गोबर की खाद प्रति क्यारी मिलाकर हल्की गुड़ाई द्वारा समतल करें एवं बीजों की सदैव कतारों में ही बुआई करनी चाहिए। बीज बोने के बाद बीजों को खाद की हल्की परत से बचाव के लिए घास से ढक देना चाहिए। सिंचाई प्रतिदिन हजारे से हल्के रूप में प्रात:काल करनी आवश्यक है। बीज शैय्या में उपस्थित जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए मृदा उपचार भी आवश्यक है, यह 0.2 प्रतिशत फाइटोलोन या 2 प्रतिशत बाविस्टीन आदि दवाओं से किया जा सकता है। बीज उगने के पश्चात बीज शैय्या से घास आदि निकालते रहना चाहिए। हल्की सिंचाई करके ही पौधों को उखाड़ना चाहिए।

सारणी 1. खिरनी के फल, बीज और छाल का रासायनिक संघटन

क्र.सं.	पोषक तत्व	पोषण मूल्य
	फल	
1.	कुल घुलनशील ठोस पदार्थ की मात्रा (डिग्री ब्रिक्स)	24.35-26.35 प्रतिशत
2.	कुल शर्करा (प्रतिशत)	17.5-18.5 प्रतिशत
3.	विटामिन सी (मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग)	18.75 प्रतिशत
4.	कुल कैरोटिनॉयड (मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग)	3.65 प्रतिशत
5.	वसा (प्रतिशत)	2.4 प्रतिशत
	खनिज लवण (प्रतिशत)	4.8 प्रतिशत
6.	गूदा (प्रतिशत)	87 प्रतिशत
	बीज	
7.	तेल (प्रतिशत)	24.6 प्रतिशत
	छाल	
8.	टैनिन (प्रतिशत)	30 प्रतिशत

ग्राफ्टिंग से तैयार पौधे 5-7^0 सेल्सियस से कम तापमान पर सूख जाते हैं।

उन्नत किस्में

थार ऋतुराज: यह चार वर्ष में फूल देना शुरू कर देती है। फूल दिसंबर के पहले सप्ताह में आते हैं और फल मई के तीसरे सप्ताह में पकने लगते हैं। फलों का औसत वजन 5.20 ग्राम, गूदा 87.49 प्रतिशत, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ की मात्रा 24.73^0 ब्रिक्स, अम्लता 0.32 प्रतिशत, कुल शर्करा 17.80 प्रतिशत और विटामिन-सी 28.33 मि.ग्रा. प्रति 100 ग्राम खाद्य भाग पाया जाता है।

प्रवर्धन

खिरनी का प्रवर्धन फांक कलम रोपण (क्लेफ्ट ग्राफ्टिंग) विधि द्वारा किया जाता है। इस कार्य के लिए एक वर्ष पुराने खिरनी के बीजू पौधे का उपयोग किया जाता है। कलम रोपण के लिए 4-6 माह पुरानी पेंसिल जितनी मोटी शाखा का चुनाव कर रोपण का कार्य फरवरी-जून में किया जाता है। पौधे पर कलम चढ़ाने के पश्चात इसे छिद्रिल पॉलीथीन कैप से ढक दिया जाता है। इससे ग्राफ्टिंग किए गए भाग में नमी बनी रहती है एवं पौधे के सूखने का डर नहीं रहता है। कलम किए गए पौधे एक साल में रोपण के लिए तैयार हो जाते हैं।

रोपण

पौध रोपण के लिए खेत को अच्छी तरह से समतल कर लेना चाहिए। इसके पश्चात सही विधि से बाग लगाने के लिए खेत का रेखांकन कर गड्ढे तैयार कर लेते हैं। बगीचा लगाने के लिए वर्गाकार विधि उचित रहती है। इससे बगीचे में कृषि कार्य सुगमता से किए जा सकते हैं। पौध रोपण के लिए 45×45×45 सें.मी. आकार के एवं 6×6 मीटर की दूरी पर गड्ढे तैयार किए जाते हैं। गड्ढे, पौधे लगाने के एक महीने पहले तैयार किए जाते हैं ताकि गर्मी की खुली धूप में इनके कीट मर जायें। गड्ढे खोदते समय ऊपर की आधी मिट्टी को एक तरफ एवं नीचे की आधी मिट्टी अलग रखते हैं। लगभग 25 दिनों

बाद ऊपरी मिट्टी में 5-10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 500 ग्राम नीम की खली तथा 50 ग्राम नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश मिश्रण को अच्छी तरह मिलाकर गड्ढे को 10 सें.मी. ऊपर तक भरें ताकि यह बरसात होने पर व्यवस्थित होकर जमीनी सतह के बराबर रहे। पौध को इसकी जड़ों से लगी मिट्टी सहित पहले से तैयार गड्ढे में लगाते हैं। इसके बाद गड्ढे को अच्छी तरह दबाकर उसके चारों तरफ थाला बनाकर पानी देना चाहिए। यदि बरसात न हो तो पौधों की 3-4 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करने से पौधे की स्थापना अच्छी होती है। खिरनी के पौधे लगाने के लिए जुलाई-अगस्त का महीना (बरसात का मौसम) उपयुक्त रहता है। यह समय पौधों के सही स्थापन के लिए उचित माना जाता है।

सिंचाई एवं देखभाल

सामान्य तौर पर, खिरनी को बरसात आधारित फल-फसल के रूप में उगाया जाता है और सिंचाई की ज्यादा आवश्यकता नहीं होती है। फसल की शुरुआती अवस्था एवं

बीज बुआई के लिए तैयार पॉलीथीन की थैली

अधिक फल प्राप्त करने के लिए गर्मी में पानी देना आवश्यक होता है। बरसात की समाप्ति के बाद एक या दो सिंचाई करना फलों के लिए लाभदायक होता है। पौध लगाने के बाद पौधों की नियमित रूप से देखभाल की जानी चाहिए। पौधों के थालों में समय-समय पर खरपतवार नियंत्रण करना चाहिए।

सधाई

नये पौधों को उचित ढांचा प्रदान करने एवं मजबूत बनाने के लिए, शुरुआती 3 वर्षों तक सधाई करनी चाहिए। जब पौधे छोटे होते हैं तो इनको सहारे की जरूरत पड़ती है। इसके लिए पौधे के तने पर जमीन से 45 सें.मी. की ऊंचाई तक सभी आड़ी-तिरछी शाखायें हटा दी जाती हैं। उसके ऊपर 3-4 शाखाएं जो चारों ओर फैली हुई हों, उन्हें बढ़ने देना चाहिए। इससे पौधों का उचित ढांचा तैयार हो जाता है।

उपज

खिरनी के पौधे प्रायः बीज से उगाये जाते हैं। बीजू पौधे वृहद आकार लेते हैं और इन पौधों पर फलत देर से आती है। पौधे अधिक उम्र तक उत्पादनशील बने रहते हैं। फल पकने पर चटक पीले रंग के हो जाते हैं एवं इनको प्रायः पकने पर तोड़ा जाता है। कच्चे फलों को खुरचने पर दूधिया स्राव निकलता है। फलों से निकलने वाला दूधिया स्राव समाप्त हो जाये और फलों का रंग हरे से पीला हो जाये, तब समझना चाहिए कि फल तोड़ने के लिए तैयार हो गए हैं। खिरनी के एक विकसित 10-15 वर्ष के वृक्ष से 20-25 कि.ग्रा. उपज प्रति वर्ष प्राप्त होती है।

नई तकनीक से ज्यादा फलेगी रसीली लीची

जलवायु परिवर्तन से लीची के स्वाद में गिरावट आने के बाद भाकृअनुप-राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र, मुजफ्फरपुर, बिहार ने नई तकनीक से न केवल लीची का उत्पादन बढ़ने का दावा किया है, बल्कि इसके आकार में वृद्धि और मिठास भी ज्यादा होने का भरोसा दिलाया है। वैज्ञानिकों के अनुसार नई तकनीक से किसान एक हैक्टर भूमि पर 15 टन लीची का उत्पादन कर सकेंगे। देश के लीची उत्पादन में बिहार की कुल 40 से 50 फीसदी तक हिस्सेदारी है। एक आंकड़े के मुताबिक, बिहार में 32 हजार हैक्टर क्षेत्रफल में लगभग तीन लाख मीट्रिक टन लीची का उत्पादन होता है। बिहार के मुजफ्फरपुर को लीची उत्पादन का गढ़ माना जाता है। इसके अलावा समस्तीपुर, पूर्वी चंपारण, वैशाली, बेगूसराय में भी लीची का उत्पादन किया जाता है।

बिहार सरकार की रिपोर्ट बताती है कि लगभग दो महीने तक लीची की फसल से सीधे तौर पर इस क्षेत्र के 50 हजार से भी ज्यादा किसान परिवारों की आजीविका जुड़ी हुई है। मुजफ्फरपुर की शाही लीची अपनी मिठास की वजह से देश-विदेश में प्रसिद्ध है। विगत 10 वर्षों में लीची की मिठास में कमी आई है और आकार भी छोटा हुआ है। जलवायु परिवर्तन को इसका प्रमुख कारण माना जा रहा है।

भाकृअनुप-राष्ट्रीय लीची अनुसंधान केंद्र ने किसानों को नई विधि से लीची उत्पादन की जानकारी दी है। इसके तहत लीची का पौधा कतार में लगाने का तरीका बताया गया। केंद्र ने पौधों को पूर्व से पश्चिम दिशा में लगाने की सलाह दी है। नई तकनीक के मुताबिक, एक से दूसरी कतार की दूरी आठ मीटर और एक से दूसरे पौधे को चार मीटर की दूरी पर लगाने का निर्देश दिया जा रहा है। अनुसंधान केंद्र का दावा है कि इस विधि से एक एकड़ में 125 पौधे लगाए जा सकेंगे।

वैज्ञानिकों के अनुसार पूर्व से पश्चिम दिशा में लगाने से लीची के हर पौधे को सूरज की रोशनी मिलेगी। इससे पौधा पुष्ट होगा और मजबूत पेड़ तैयार होगा और इस प्रकार पेड़ पर लीची की मिठास और आकार दोनों में वृद्धि होगी। लीची के पेड़ को नियमित सूरज की रोशनी मिलने से उस पर कीट का प्रभाव भी कम पड़ने की संभावना रहेगी और उसे सौर ऊर्जा मिलती रहेगी। इस विधि से तापमान बढ़ने का भी कम प्रभाव पड़ेगा।

लीची उत्पादन की इस विधि के लिए यह संस्थान उन्नत किस्म के पौधे भी तैयार कर रहा है। क्षेत्र विस्तार योजना के तहत राज्य में ही नहीं, अन्य राज्यों-उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड में भी नई विधि से लीची उत्पादन का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। आमतौर पर एक हैक्टर में लगभग सात टन लीची का उत्पादन होता है। संस्थान का वर्ष 2050 तक देश में लीची का उत्पादन 17 लाख टन करने का लक्ष्य है। वर्तमान समय में लीची का उत्पादन करीब सात लाख टन है।

गुलाब के मूल्यवर्धक उत्पाद

अस्मिता[1], नीतू कुमारी[2], सतवीर सिंह सिंधु[3] और **मारकंडे सिंह[4]**

गुलाब को देखकर किसी का भी मन आनन्द से भर जाता है। कट फ्लावर के अलावा गुलाब से विभिन्न प्रकार के मूल्यवर्धक उत्पाद भी बनाये जाते हैं, जिसकी बाजार में बहुत मांग है। इन मूल्यवर्धक उत्पादों में गुलाब जल का प्राचीनकाल से ही विशेष स्थान है। सर्वप्रथम 8वीं शताब्दी में ईरान से गुलाब जल का निर्यात शुरू हुआ एवं 9वीं शताब्दी में हिंदुस्तान और चीन से भी निर्यात शुरू हो गया। धीरे-धीरे यह विश्व के अन्य देशों जैसे कि मिस्र, मोरक्को, फ्रांस, चीन और भारत में भी एक उद्योग के रूप में विकसित हो गया। गुलाब के फूल का 80 प्रतिशत हिस्सा गुलाब जल बनाने के उपयोग में लाया जाता है। भारत में गुलाब की व्यावसायिक खेती उत्तर प्रदेश, राजस्थान और पंजाब में की जाती है।

गुलाब की खेती हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु के चेन्नई और कोयंबटूर में परफ्यूम उद्योग के लिए की जाती है। उत्तर प्रदेश के अलीगढ़, कन्नौज, इटावा, गाजीपुर और बलिया जिले प्रमुख गुलाब उत्पादक क्षेत्र हैं। अलीगढ़ को छोड़ बाकी जिले गुलकंद के उत्पादन के लिए भी मशहूर हैं, जबकि अलीगढ़ गुलाब तेल और गुलाब जल के लिए प्रसिद्ध है। राजस्थान के चित्तौड़गढ़ से हल्दीघाटी तक महारानी गुलाब का उत्पादन, प्रमुख मूल्यवर्धक उत्पाद बनाने के लिए किया जाता है।

रोसा दमासियाना

[1] व [2]सहायक प्राध्यापक सह कनीय वैज्ञानिक, उद्यान विज्ञान विभाग, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, कांके, रांची-834006 (झारखंड); [3]विभागाध्यक्ष एवं प्रधान वैज्ञानिक; [4]वरिष्ठ वैज्ञानिक, पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

प्रमुख प्रजातियां

रोसा दमासियाना

इसे महारानी गुलाब भी कहा जाता है। यह परफ्यूम उद्योग में गुलाब की अन्य

रोसा बौरबियाना

प्रजातियों की तुलना में सबसे ज्यादा उपयोग में लाया जाता है। इसके फूल में उत्तम कोटि (30-35 प्रतिशत जिरानिओल) और ज्यादा गुलाब तेल की मात्रा (0.03 प्रतिशत) पायी जाती है।

करोसा सेंटिफोलिया

गुलकंद

यह गुलाब की पंखुड़ियों से बनी एक स्वादिष्ट मिठाई है। गुलाब की ताजी पंखुड़ियों और मिश्री को बराबर अनुपात (1:1) में मिलाकर बनाया जाने वाला यह उत्पाद स्वाद के साथ स्वास्थ्य के लिए भी कई तरह से फायदेमंद होता है। गुलकंद शरीर के अंगों को ठंडक प्रदान करता है। शरीर में गर्मी बढ़ जाने पर गुलकंद का सेवन बेहद लाभदायक होता है। यह गर्मी से पैदा हुई समस्याओं से निजात दिलाता है। इसका नियमित सेवन दिमाग के लिए भी बेहद लाभकारी है। बस एक चम्मच गुलकंद सुबह और शाम खाने से न केवल आपके दिमाग को तरावट मिलेगी बल्कि दिमाग शांत भी रहेगा और गुस्सा भी नहीं आएगा। गुलकंद में पोषक तत्वों के साथ बड़ी मात्रा में एंटीऑक्सीडेंटस भी पाए जाते हैं, जो शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाकर थकान को कम करते हैं। यह एक अच्छा एंटीबैक्टीरियल है, जो त्वचा संबंधित समस्याओं में बहुत फायदेमंद है। त्वचा को डिहाइड्रेट करता है। खाना खाने के बाद गुलकंद को खाने से यह खाना पचाने में मदद करता है और पाचन संबंधित समस्याओं को दूर करता है। गुलकंद एक अच्छा माउथफ्रेशनर भी है।

रोसा दमासियाना की प्रमुख किस्में: नूरजहां, ज्वाला और हिमरोज इसकी प्रमुख प्रजातियां हैं, जिसे भारत में परफ्यूम उद्योग के लिए व्यावसायिक तौर पर उगाया जाता है। नूरजहां और ज्वाला की खेती मैदानी इलाकों के लिए अनुशंसित की गयी है, जबकि हिमरोज को ठंडे इलाकों के लिए अच्छा माना जाता है।

रोसा मोसकाटा

गुलाब जल

यह गुलाब की पंखुड़ियों से निकाला गया द्रव है। इसका उपयोग भोजन में फ्लेवर देने, सौन्दर्य प्रसाधनों व दवाओं के निर्माण एवं धार्मिक कार्यों में किया जाता है। देसी विधि से गुलाब जल भट्ठियों पर तैयार किया जाता है। सूर्योदय से पूर्व गुलाब के फूलों को तोड़ा जाता है। भट्ठियों पर रखे तांबे के देग में 40 कि.ग्रा. फूल व इतना ही पानी डालकर भट्ठी चालू कर दी जाती है। देग में जो भाप बनती है वह बांस की नली से तांबे के मटके में एकत्रित कर ली जाती है। ठंडा होने पर यह गुलाब जल में परिवर्तित हो जाती है। 40 कि.ग्रा. फूल से लगभग 35 लीटर गुलाब जल बन जाता है। गुलाब जल 'ए', 'बी' व 'सी' श्रेणी में निकाला जाता है। 'ए' व 'बी' श्रेणी का गुलाब जल काम में लिया जाता है, जबकि 'सी' श्रेणी को वापस देग में डाल दिया जाता है। इस विधि से एक बार गुलाब जल तैयार करने में 6-7 घंटे लग जाते हैं।

रोसा अल्वा

अगरबत्ती और धूपबत्ती

रोसा बौरबियाना

इसका उपयोग मुख्यत: कलम बांधने या गुलकंद और गुलाब जल बनाने में होता है।

रोसा सेंतिफोलिया

इस प्रजाति को मुख्यत: फ्रांस में गुलाब जल और गुलाब तेल बनाने में उपयोग में लाया जाता है।

रोसा मोसकाटा

यह हिमालय में जंगली (वाइल्ड) रूप में पाया जाता है।

रोसा अल्बा

सफेद फूल वाली इस प्रजाति को मुख्य रूप से बुल्गारिया में उगाया जाता है।

गुलाब के प्रमुख मूल्यवर्धक उत्पाद

गुलाब तेल

गुलाब में 12 घटकों को खोजा गया है। उनमें से केवल एक ही पानी में घुलनशील है, बाकी 11 को गुलाब का तेल कहा जाता है। गुलाब का तेल परफ्यूम उद्योग में इस्तेमाल होने वाले तेल में सबसे महंगा होता है। एक लीटर गुलाब का तेल

आकर्षक गुलाब

गुलाब का तेल

बनाने में करीब 3500-4000 कि.ग्रा. गुलाब के फूलों की जरूरत पड़ती है। गुलाब के तेल में डिप्रेशन को कम करने वाले एंटीसेप्टिक, एंटीवायरल और एंटीबायटिक गुण पाये जाते हैं। गुलाब से निकाले गए तेल की कीमत बाजार में 4-5 लाख रुपये तक होती है। महारानी गुलाब की खेती अगर एक एकड़ में की जाए तो उससे करीब 800 मि.ली. गुलाब तेल निकाला जा सकता है। अगर किसान 2 एकड़ में महारानी गुलाब की खेती करते हैं तो आसानी से 7-8 लाख रुपये कमा सकते हैं। इसकी मांग विदेशों में भी बहुत ज्यादा है। आजकल तो ऑनलाइन बिक्री भी शुरू हो गयी है।

गुलाब की पंखुड़ियां

पंखुड़ी

गुलाब के फूल को छाया में सुखाने के बाद जो उत्पाद बचता है, उसे पंखुड़ी कहते हैं। इसे गर्मी में पेय पदार्थ के अलावा सजावट में भी उपयोग में लाया जाता है।

अगरबत्ती और धूपबत्ती

अपरिष्कृत आसवन विधि (क्रूड डिसटिलेशन मेथड) में फूल का पूरी तरह उपयोग नहीं होता है। आसवन के बाद जो गुलाब के फूल का अवशेष बचता है, उसमें कुछ महक बची रहती है। इसे छाया में सुखाया जाता है और अगरबत्ती और धूपबत्ती बनाने के काम में लाया जाता है। इन फूलों के अवशेष को हवन सामग्री बनाने के काम में भी प्रयोग किया जाता है। मंदिर में पूजा के लिए उपयोग में आने वाले गुलाब फूल को चढ़ावे के बाद इस तरह के उत्पाद बनाने से बर्बादी भी कम होती है और रोजगार के अवसर भी प्राप्त होते हैं। ■

पुदीने की उन्नत खेती

चंदन कुमार, मोती लाल मीणा और **धीरज सिंह**
काजरी-कृषि विज्ञान केन्द्र, पाली-मारवाड़ 306 401 (राजस्थान)

वैश्वीकरण के दौर में जहां एक ओर वैश्विक कृषि व्यावसायीकरण की ओर गतिशील दिखाई देती है, वहीं दूसरी ओर भारतीय कृषि आज भी परंपरागत खेती को अपने युवा कंधों व तकनीकी दिमाग पर बोझ बनाये बैठी है। वर्तमान समय परंपरागत खेती से हटकर बाजार मांग के अनुसार फसल उत्पादन का है, जहां नये कृषि उत्पादों का उत्पादन कर किसान अपनी आय को उच्चतम स्तर तक पहुंचा सकते हैं। पुदीना लेमिएसी कुल से संबंधित एक बारहमासी खुशबूदार पौधा है। इसकी खेती मुख्यत: इसकी हरी, ताजा और खुशबूदार पत्तियों के लिए की जाती है।

गांव-घरों में पनियारी के पास जहां पानी नियमित रूप से लगता है, पुदीना लगाया जा सकता है। शहरों में लोग अपनी छतों पर पुदीने को गमलों में लगाकर रखते हैं। महानगरों में लोग अपनी खिड़कियों तथा रोशनदानों में पुदीना लगे गमले रखते हैं, जिससे उनको पुदीने की हरी ताजी पत्तियां भी मिल जाती हैं और घरों में हवा के साथ पुदीने की भीनी-भीनी खुशबू भी फैल जाती है। इसकी खेती को लेकर पिछले कई वर्षों से किसान उत्सुक दिखाई देते हैं और हो भी क्यों नहीं, पुदीना है ही कुछ ऐसा कि इसका नाम सुनकर ही हम सबके मुंह में पानी भर आता है। इसका आमतौर पर हम चटनी बनाने के लिए उपयोग करते हैं। इसके साथ ही साथ पुदीने के अन्य औषधीय उपयोग भी हैं।

इससे निकाले जाने वाले सुगंधित तेल व अन्य घटकों का उपयोग सौन्दर्य प्रसाधनों, विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों को सुगंधित करने, टॉफी तथा च्यूइंगम बनाने, पान के मसालों को सुवासित करने, खांसी-जुकाम, सिरदर्द की औषधियां बनाने एवं उच्चस्तर की शराब को सुगंधित बनाने में होता है। ग्रीष्मकाल के दौरान लू से बचने का पेय पदार्थ बनाने में पुदीना बहुत उपयोगी होता है। भारत, पुदीना उत्पादन के क्षेत्र में सबसे आगे है। हमारे देश को पुदीने के निर्यात के फलस्वरूप लगभग 800 करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा प्रतिवर्ष मिलती है, क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में पुदीने के तेल तथा अन्य घटकों की भारी मांग है।

जलवायु

पुदीने की खेती कई तरह की जलवायु में की जा सकती है। यह शीतोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु में आसानी से लगाया जा सकता है। इसे सिंचित तथा असिंचित दोनों दशाओं में लगाया जा सकता है। सिंचित अवस्था में इसकी उपज असिंचित की अपेक्षा ज्यादा प्राप्त होती है।

मृदा

सिंचित फसल के रूप में पुदीना लगभग सभी प्रकार की मृदाओं में उगाया जा सकता है। बशर्ते उसमें जैविक खाद का उपयोग उपयुक्त मात्रा में किया गया हो। उचित जल निकास वाली रेतीली दोमट मिट्टी पुदीने की खेती के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। खेतों में मृदा का पी-एच मान 6-7 तक हो तो वे खेत पुदीने की खेती के लिए उपयुक्त माने जाते हैं।

खाद एवं उर्वरक

प्रति हैक्टर पुदीने की खेती के लिए 200-500 क्विंटल गोबर की खाद या

पुदीने के प्रकार

आजकल पुदीने की प्रमुखत: दो प्रजातियां प्रचलन में हैं:

- मेन्था पिपरीटा (विलायती पुदीना)
- मेन्था आर्वेन्सिस (जापानी पुदीना)

भारत में सामान्यत: उगायी जाने वाली प्रजाति 'जापानी पुदीना' है। यह मुख्यत: उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में उगायी जाती है।

उन्नत किस्में

एम.ए.एस. 1, कोसी, कुशाल, सक्षम, गोमती (एच.वाई. 77), शिवालिक, हिमालय आदि मुख्यत: उगायी जाने वाली पुदीने की उन्नत किस्में हैं।

कम्पोस्ट खाद तथा 120-135, 50-60 और 50-60 कि.ग्रा. एन.पी.के. का उपयोग करना चाहिए।

पौध रोपण/बुआई

पुदीने की फसल के लिए अंत: भूस्तारी (सकर अथवा स्टोलॉन) का उपयोग किया जाता है। एक हैक्टर क्षेत्र के लिए लगभग 200-250 कि.ग्रा. जड़ों की आवश्यकता होती है। इसकी रोपाई का उपयुक्त समय जनवरी-फरवरी माना जाता है, परंतु अप्रैल-मई में भी इसकी रोपाई की जा सकती है। अगर रोपाई फरवरी में की जाये तो मात्र 2-3 सप्ताह में इसकी जड़ें फूट आती हैं और आसानी से जल्दी ही पूरा पौधा फैल जाता है।

पुदीना लगाने के लिए इसकी मिट्टी के अंदर की भूस्तारिकाओं को 10-15 सें.मी. जमीन में दबा दिया जाता है। रोपण के दौरान यह अवश्य ध्यान रखें कि भूस्तारिकायें जमीन में 5 सें.मी. से अधिक गहरी न चली जाएं।

विभिन्न उत्पादों के लिए पुदीने के तेल की भारी मांग

सिंचाई एवं जल निकास

शुष्क क्षेत्रों में उगाये जाने वाले पुदीने की समय-समय पर तथा उचित मात्रा में सिंचाई की जानी चाहिए। पत्तियों की उपज तथा तेल की गुणवत्ता के लिए सिंचाई का बहुत महत्व है। रोपाई के बाद प्रत्येक 10-12 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। बरसात के दिनों में इसके लिए खेतों में जल निकास की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए अन्यथा पौधा पानी की अधिक मात्रा के कारण नष्ट हो जाता है।

आय का उत्तम स्रोत है पुदीना

खरपतवार नियंत्रण

पुदीने की फसल में खरपतवार के नियंत्रण के लिए कुल तीन बार निराई की जानी चाहिए। प्रथम निराई रोपण के लगभग एक माह बाद, द्वितीय लगभग दो माह बाद तथा तृतीय कटाई के लगभग 15 दिनों बाद की जानी चाहिए। खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशी जैसे कि पेन्डीमिथेलान (स्टाम्प) (1 कि.ग्रा. 100 लीटर पानी के साथ घोल बनाकर) का उपयोग भी किया जा सकता है।

कीट एवं रोग प्रबंधन

- रोयेंदार सूंडी तथा पत्ती रोलर कीट की रोकथाम के लिए 300-400 मि.ली. क्यूनालफॉस प्रति हैक्टर 625 लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। मैलाथियान 50 ई.सी. 7 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव भी इस कीट के नियत्रंण के लिए उपयुक्त है।
- लालड़ी (कद्दू का लाल भृंग) की रोकथाम के लिए मैलाथियान 50 ई.सी. 1 मि.ली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।
- कटुआ कीट (कटवर्म) तथा दीमक की रोकथाम के लिए अंतिम जुताई के समय फॉरेट दानेदार 10 जी रसायन 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से खेत की मृदा में मिलायें।
- भूस्तारी सड़न तथा जड़गलन रोगों की रोकथाम के लिए रोपण के समय कैप्टॉन (25 प्रतिशत) अथवा बेनलेट (0-1 प्रतिशत) से उपचारित करना चाहिए।
- रतुआ तथा पत्ती धब्बा रोगों की रोकथाम के लिए ब्लाटॉक्स (3 प्रतिशत) अथवा डाइथेन एम-45 (0-2 प्रतिशत) का छिड़काव करें।
- चूर्णिल आसिता रोग के प्रबंधन के लिए घुलनशील गंधक अथवा कैराथन (25 प्रतिशत) का प्रयोग करें।

तुड़ाई/कटाई एवं उपज

पुदीने की प्रथम कटाई रोपण के करीब 100-120 दिनों बाद (जून में) की जाती है। दूसरी कटाई पहली कटाई के 70-80 दिनों बाद (अक्टूबर में) की जानी चाहिए। अगर इसकी कटाई सही समय पर न की जाये तो इसकी उपज तथा तेल की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। एक साल में दो बार कटाई के फलस्वरूप एक हैक्टर से लगभग 20-25 टन पुदीना पत्तियों की उपज प्राप्त होती है, जिनसे प्रतिवर्ष लगभग 250 कि.ग्रा. तेल प्राप्त होता है। ■

आलू का शत्रु है कवचधारी सूत्रकृमि

आरती बैरवा[1], संजीव शर्मा[2], ई.पी. वेंकटासलम[3], प्रियंक हनुमान महात्रे[4] और एस.के. चक्रबर्ती[5]

दक्षिण अमेरिका का एंडिस पर्वत आलू तथा कवचधारी सूत्रकृमि की उत्पत्ति का स्थान माना जाता है। वर्ष 1850 में कवचधारी सूत्रकृमि, आलू की ब्लाइट प्रतिरोधक किस्मों के साथ दक्षिण अमेरिका से यूरोप में फैला था। यूरोप से बीजकंद तथा प्रजनन सामग्री के साथ दुनिया के अन्य देशों में फैलने के कारण यूरोप को कवचधारी सूत्रकृमि का द्वितीयक वितरण केंद्र माना जाता है। एक धारणा है कि यह द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान मानव भोजन और सैन्य उपकरणों के प्रवेश के साथ एशियाई देशों के कई हिस्सों में फैल गया था। कवचधारी सूत्रकृमि, आलू का एक छोटा, पर शक्तिशाली कीट है। संगरोध महत्व के कारण आज आलू के वैश्विक व्यापार के लिए एक गंभीर खतरा है। भारत में, कवचधारी सूत्रकृमि की उपस्थिति वाले क्षेत्रों में सख्त नियामक, स्वच्छता उपायों और एकीकृत कृमि प्रबंधन कार्यों को मजबूती के साथ लेने से भविष्य में इसके उन्मूलन की संभावना है।

आलू, मुख्य सब्जी फसल है। भारत में इसकी खेती एक प्रमुख फसल के रूप में की जाती है। विभिन्न रोगों तथा कीटों के कारण इसकी खेती प्रभावित हो रही है। आलू के प्रमुख कीटों में कवचधारी सूत्रकृमि का नाम है, जिसे पुट्टी कृमि या सुनहरे सूत्रकृमि या पोटैटो सिस्ट नेमोटोड के नाम से भी जाना जाता है। यह भारत सहित दुनिया भर के कई देशों में आलू के उत्पादन रोधक खतरनाक कीटों में से एक है। एक उपयुक्त परपोषी पौधे के अभाव में यह मृदा में लंबे समय तक जीवित रहता है। अपने अद्भुत छोटे आकार के कारण किसानों, वैज्ञानिकों और कृषि कर्मियों के लिए यह एक चुनौती बन गया है। आज के समय में आलू के घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय व्यवसाय के लिए कवचधारी सूत्रकृमि एक गंभीर खतरा बन गया है।

वर्ष 1961 में यूके के डा. एफ.जी. डब्ल्यू. जोन्स, तमिलनाडु के उदामंडलम, नीलगिरी जिले में भ्रमण पर आए थे। उस दौरान उन्हें पहली बार समुद्र तल से 7000 फीट की ऊंचाई पर तमिलनाडु के विजयनगरम क्षेत्र में आलू की पीली फसल दिखाई दी तथा पौधे की जड़ों पर गोल सुनहरे रंग के सिस्ट मिले। इस तरह जोन्स को कवचधारी सूत्रकृमि के होने का पता चला। इसके बाद तमिलनाडु की कोडाईकनाल पहाड़ियों में वर्ष 1983 तथा तमिलनाडु की सीमा से जुड़े केरल के पश्चिमी घाट के सर्वेक्षण के दौरान, आलू के कई खेतों में कवचधारी सूत्रकृमि के व्यापक प्रसार के बारे में जानकारी मिली।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद एवं तमिलनाडु सरकार द्वारा संयुक्त रूप से वित्तपोषित 'गोल्डन नेमोटोड स्कीम' की शुरूआत अक्टूबर 1963 में की गई। इसके तहत आलू के गोदामों और खेतों का बड़े पैमाने पर निरीक्षण किया गया। इस निरीक्षण के बाद यह पता चला कि कवचधारी सूत्रकृमि मुख्य रूप से तमिलनाडु की नीलगिरी और कोडाईकनाल की पहाड़ियों तक ही सीमित है। इन पहाड़ियों से कवचधारी सूत्रकृमि के नए क्षेत्रों में प्रसार को रोकने के लिए वर्ष 1971 में घरेलू संगरोध लगाया गया था। इस घरेलू संगरोध के कारण तमिलनाडु राज्य के बाहर अन्य दूसरे राज्यों के लिए आलू निर्यात करने पर रोक लगा दी गई थी। हाल ही में कवचधारी सूत्रकृमि की हिमाचल प्रदेश के शिमला (खदराला, उमलदवर, सारपानी, खारापानी, टूटूपानी, हंसतारी तीर, पोनिधर, देवरीघाट, खड़ा पत्थर, केंद्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, कुफरी और फागू, रोहडू ब्लॉक, चोपाल ब्लॉक, जुब्बल ब्लॉक), सिरमौर (खेड़ाधर), मंडी (फुलाधर), चंबा (अहला), कुल्लू (छोवाई) एवं कांगड़ा जिले (राजगुंडा) में (जम्मू एवं कश्मीर राज्य के रामबान (नाथ टोप), राजौरी (कांडी बुड्डाल), शोपिया (सिड्यू), जम्मू (आलू बीज फार्म, नाथा टोप एवं कांडी बुड्डाल) में और उत्तराखंड राज्य के पिथौरागढ़ (बलाती, मुंशीयारी, तिकसैन), टिहरी (रानी चौरी, घनुलटी),

कवचधारी सूत्रकृमि के प्रकोप के प्रारंभिक लक्षण

[1]वैज्ञानिक, [2]प्रधान वैज्ञानिक, निदेशक भाकृअनुप –केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला (हिमाचल प्रदेश); [3]प्रधान वैज्ञानिक एंव [4]वैज्ञानिक भाकृअनुप–केन्द्रीय आलू अनुसंधान केन्द्र, उदगमंडलम, नीलगिरी (तमिलनाडु)

जीवनचक्र

- मेजबान परपोषी पौधे की जड़ों से स्रावित द्रव में उपस्थित प्रेरक रासायनिक पदार्थों जैसे ग्लायकोएल्केलोइड्स (सोलेनिन तथा चाकोनीन) के कारण दूसरे चरण के कृमि अर्थात जुवेनाइल कवच से निकलकर बाहर मृदा में आते हैं।
- जुवेनाइल के मृदा में आने के बाद यह शूचिका या स्टाइलेट के माध्यम से जड़ों पर आक्रमण शुरू कर देते हैं। यह शूचिका, सूई के आकार की होती है, जो पौधे की कोशिकाओं से पोषक पदार्थों को लेने में कवचधारी सूत्रकृमि की सहायता करती है।

कवचधारी सूत्रकृमि का जीवनचक्र

- जड़ों में प्रवेश करने के बाद यह महाकोशिकाओं का निर्माण शुरू कर पोषक तत्वों को ग्रहण करते हैं। ये जड़ों पर निर्मोचन करके तीसरी और चौथी अवस्था में प्रवेश कर जाते हैं।
- चौथे चरण के बाद मादा कृमि अपने आकार में वृद्धि कर गोलाकार रूप धारण कर लेती है। नर सूत्रकृमि लंबे सूत्रों का आकार लेते हैं।
- वयस्क मादा अपना जीवनचक्र पूरा करने के लिए अपनी गर्दन को पौधे की जड़ों के साथ जोड़कर रखती है। मादा कृमि का व्यास 0.7 मि.मी. से 0.8 मि.मी. होता है। रंग पीला या सफेद होता है, जो जीवनचक्र पूरा होने के बाद धीरे-धीरे भूरे रंग में बदल जाता है।
- इनका जीवनचक्र लगभग 35 से 40 दिनों में पूरा होता है। मादा सूत्रकृमि अंडों को सुरक्षित रखने के लिए अपनी शरीर भित्ती को कठोर परत में बदल देती है, जिसे कवच या सिस्ट कहते हैं। आलू की खुदाई के बाद यह कवच में निष्क्रिय अवस्था में रहता है।
- कवचधारी सूत्रकृमि मेजबान पौधे की अनुपस्थिति में जमीन में 20-30 वर्षों तक सुषुप्तावस्था में जीवन व्यतीत कर सकता है। इसी गुण के कारण कवचधारी सूत्रकृमि का निदान एक प्रश्नचिन्ह बन गया है।

चमोली (रामानी), अल्मोड़ा (पटोरिया), नैनीताल (माला रामगढ़ फार्म) की पहाड़ियों में आलू उगाने वाले क्षेत्रों से उपस्थिति मिली है। इसलिए भारत सरकार ने 2018 में इन क्षेत्रों से आलू के बीज की आवाजाही को प्रतिबंधित कर दिया है।

कवचधारी सूत्रकृमि ग्रसित क्षेत्र

उपज में नुकसान

कवचधारी सूत्रकृमि के 20 अंडे/ग्राम मृदा में होने से यह फसल हानि का प्रमुख कारण बनते हैं। इस कृमि के कारण वैश्विक स्तर पर अकेले आलू की फसल को 30 प्रतिशत तक नुकसान होता है। भारत में कवचधारी सूत्रकृमि के द्वारा कंद की उपज का नुकसान 5 से 80 प्रतिशत तक पाया गया है।

कवचधारी सूत्रकृमि का प्रसार

यह कृमि आमतौर पर निम्नलिखित माध्यमों से फैलता है:

- मृदा के फैलाव से
- कवचधारी सूत्रकृमि प्रभावित क्षेत्रों के आलू के बीज की नये क्षेत्रों में बुआई से
- सिंचाई और वर्षा के पानी में बुआई से
- कवचधारी सूत्रकृमि, प्रभावित क्षेत्र में पहली बार कृषि उपकरणों के प्रयोग के पश्चात साफ क्षेत्र में उपकरणों का प्रयोग करने से
- पशुओं के खुरों और मजदूरों के जूतों के माध्यम से

जड़ों में कवचधारी सूत्रकृमि का संक्रमण

- बोरों के माध्यम से जिसमें कवचधारी सूत्रकृमि संक्रमित क्षेत्र से लाए गए आलू पहले से संग्रहीत किए गए थे

लक्षण

- प्रारंभ में, हल्के पीले रंग के संक्रमित पौधे छोटे-छोटे खंडों में खेत में देखे जाते हैं। पौधों में यह लक्षण पोषक तत्वों की कमी से होने वाले लक्षणों के समान दिखाई देते हैं।
- दिन की गर्मी में ये संक्रमित पौधे अस्थाई रूप से कमजोर और सूखे पड़ जाते हैं।
- कवचधारी सूत्रकृमि का अधिक प्रकोप होने पर जमीन के ऊपर पौधे गंभीर रूप से सुस्त और अस्वस्थ दिखाई देते हैं तथा पौधों का विकास अवरुद्ध हो जाता है।
- शुरुआत में निचली पत्तियां पीले और भूरे रंग में बदल जाती हैं और धीरे-धीरे पूरा पौधा सूख जाता है।
- संक्रमित पौधे छोटे, समय से पूर्व पीले एवं कमजोर जड़ संरचना वाले होते हैं, जिन पर कम मात्रा में छोटे कंद लगते हैं।
- आलू कंद के रोपण के 55-60 दिनों बाद संक्रमित पौधे को जमीन से बाहर निकालने पर जड़ों के साथ चिपके सरसों के बीज के आकार के पीले या सफेद रंग के मादा कवचधारी सूत्रकृमि दिखाई देते हैं। ये 70 दिनों बाद भूरे कवच में परिवर्तित हो जाते हैं।

जमीन के नीचे संक्रमित पौधों की जड़ प्रणाली खराब विकसित होती है। इसके कारण कंद के आकार और उपज में काफी कमी आ जाती है।

कवचधारी सूत्रकृमि का प्रबंधन

- **प्रतिरोधी किस्में:** कवचधारी सूत्रकृमि प्रतिरोधी किस्में जैसे-कुफरी स्वर्णा, कुफरी नीलिमा और कुफरी सहयाद्री आदि का चयन कवचधारी सूत्रकृमि के प्रबंधन के लिए एक कारगर, किफायती और पर्यावरण हितैषी उपाय है। कुफरी स्वर्णा और कुफरी सहयाद्री किस्में कवचधारी सूत्रकृमि और झुलसा रोग के लिए संयुक्त प्रतिरोधी हैं।

कवचधारी सूत्रकृमि प्रतिरोधी आलू 'कुफरी सहयाद्री'

डेजोमेट (90 जी) को मृदा में मिलाने की प्रक्रिया

- **फसलचक्र:** आलू की तरह सोलेनेसी परिवार के कुछ पौधे जैसे टमाटर, बैंगन आदि कवचधारी सूत्रकृमि के परपोषी पौधे हैं। इसलिए आलू को फसलचक्र में गैर-सोलानेसी फसलों के साथ व्यापक रूप से लगाने से कवचधारी सूत्रकृमियों की संख्या में कमी आती है।

गैर-सोलेनेसी फसलें जैसे-मूली, बंदगोभी, फूलगोभी, शलजम, लहसुन, गाजर आदि को आलू के साथ तीन-चार साल तक फसलचक्र में लगाने एवं हरी खाद फसल आदि के उपयोग से कवचधारी सूत्रकृमि की संख्या में 50 प्रतिशत से अधिक कमी के साथ उपज में भी वृद्धि होती है।

- **सहरोपण करके:** आलू को फ्रेंच बीन्स के साथ (3 पंक्तियां आलू तथा 2 पंक्तिया फ्रेंच बीन्स की) तथा मूली के साथ (2 पंक्तियां आलू की तथा 1 पंक्ति मूली की) के अनुपात में सहरोपण करने से कवचधारी सूत्रकृमि की संख्या में धीरे-धीरे कमी आती है।
- **ट्रैप क्रॉपिंग:** कवचधारी सूत्रकृमि के लिए अति संवेदनशील आलू की किस्म कुफरी ज्योति को ट्रैप क्रॉप की तरह लगाकर 45 दिनों के अंदर फसल को नष्ट करने से सूत्रकृमि का जीवनचक्र पूरा नहीं हो पाता है तथा कवचधारी सूत्रकृमि की आबादी में कमी होने लगती है।
- **जैविक नियंत्रण:** जैविक नियंत्रण प्रतिनिधियों, जैसे *स्यूडोमोनास फ्लूयोरोसेनस* या *पैसिलोमाइसीस लीलासीनस* के 10 कि.ग्रा./हैक्टर पर प्रयोग करने पर 8 से 10 प्रतिशत तक कवचधारी सूत्रकृमियों की संख्या में कमी आती है।
- ट्राइकोडर्मा विरडी (5 कि.ग्रा./हैक्टर) को नीम की खली (5 टन/हैक्टर) के साथ मिश्रित कर कवचधारी सूत्रकृमि संक्रमित क्षेत्र में उपयोग करने से कृमि संख्या में कमी आती है।
- **कृमिनाशक:** कृमिनाशक कार्बोफ्यूरॉन 3 जी/65 कि.ग्रा./हैक्टर को पादप रोपण के समय मृदा में मिलाने से कृमि की संख्या में कमी आती है। धुआरी कीटनाशक, डेजोमेट (90 जी)/300-400 कि.ग्रा./हैक्टर, कवचधारी सूत्रकृमि की संख्या में कमी लाने में प्रभावी पाया गया है। डेजोमेट को डालने से पहले मृदा को पानी डाल कर नरम बनाना जरूरी होता है। डेजोमेट को मृदा में मिलाकर पॉलीथीन शीट से 1 सप्ताह तक ढककर रखने की आवश्यकता होती है ताकि धुआंरी कीटनाशक की गैस मृदा में उपस्थित सूत्रकृमि को नष्ट कर दें। इसके पश्चात पॉलीथीन शीट को निकाल कर एक सप्ताह तक खुला छोड़ने से जितनी भी डेजोमेट की गैस मृदा में होती है वह वायु में मिल जाती है। मृदा का तापमान 120 सेल्सियस से नीचे है तो डेजोमेट को मृदा में मिलाने के बाद 3 सप्ताह तक पॉलीथीन से ढककर रखने के बाद 2 सप्ताह खुला छोड़ने से आलू के बीज की रोपाई करने से आलू के अंकुरण पर विपरीत प्रभाव नहीं होता है। कृमिनाशक का दोहरा उपयोग महंगा है, लेकिन यह कृमि की संख्या को कम करने में सहायक है।
- **एकीकृत प्रबंधन:** उपरोक्त प्रबंधन का एकीकरण कर आलू की फसल में कवचधारी सूत्रकृमियों की संख्या में कमी लायी जा सकती है। ■

बैंगन में कीट एवं रोग प्रबंधन

दीपक मौर्य और **तीथार्थ चट्टोपाध्याय**
सब्जी विज्ञान विभाग और पादप प्रजनन एवं आनुवंशिकी विभाग, बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर (बिहार)

बैंगन एक लोकप्रिय सब्जी है और देशभर में बड़े पैमाने पर उगायी जाती है। बैंगन में कई पोषक तत्व पाये जाते हैं, जो हमारे अंग-तंत्र को सुचारू रूप से चलाने में सहायक होते हैं। इसमें मुख्यत: कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहा, विटामिन-बी और विटामिन-सी पाये जाते हैं। इसकी खेती उचित प्रबंधन तकनीकी से की जाती है तो उपज अगेती फसल में 250-350 क्विंटल/हैक्टर, दीर्घावधि फसल में 400-450 क्विंटल/हैक्टर तथा संकर प्रजाति में 400-800 क्विंटल/हैक्टर होती है।

बैंगन की फसल पर बहुत अधिक कीटों, रोगों एवं सूत्रकृमियों का प्रकोप होता है, जिसके परिणमस्वरूप कभी-कभी उपज में काफी घाटा होता है। इसकी नरम और कोमल प्रकृति तथा उच्च नमी वाले क्षेत्रों में इसकी खेती के कारण इस पर कीट हमले का खतरा अधिक होता है। एक अनुमान के अनुसार रोगों तथा कीटों के प्रभाव से बैंगन के उत्पादन में 40-50 प्रतिशत का नुकसान होता है।

कीट

माहूं

शिशु और वयस्क कीट, पत्तों का रस चूसते हैं। प्रभावित पौधे पीले एवं विकृत हो जाते हैं और सूख जाते हैं। माहूं भी मधुरस का स्राव करते हैं, जिस पर काली फफूंद लगती है। यह प्रकाश संश्लेषण गतिविधि को प्रभावित करती है।

तना और फलछेदक

प्रारंभिक चरणों में लार्वा तने में छेद कर देता है, जिससे विकास का बिंदु मर जाता है। मुरझाये झुके हुए तने का दिखाई देना इसका प्रमुख लक्षण है। बाद में लार्वा फल में छेद कर देते हैं और वे खाने योग्य नहीं रहते।

लाल मकड़ी

लार्वा, शिशु और वयस्क मुख्य रूप से पत्तियों की निचली सतह पर हजारों की संख्या में चिपककर रस चूसते हैं। पत्तियों में मकड़ी के जाल जैसा दिखाई देता है और पत्तियां पीली हो जाती हैं।

प्ररोह एवं फल भेदक

यह सर्वाधिक हानि पहुंचाने वाला कीट है। प्रारंभ में इसके गिडार प्ररोह को भेदकर भीतर घुस जाते हैं। फलों को भेदते हैं और फल का आकार विकृत हो जाता है।

हड्डा बीटिल

कांसे के रंग जैसी यह लाल रंग की छोटी बीटिल होती है, जो सभी वायुवीय भागों को खाती है।

लाल कीट

ये लाल रंग के छोटे कीट मुख्य रूप से पत्तियों की निचली सतह पर हजारों की संख्या में चिपककर रस चूसते हैं। पत्तियों में मकड़ी का जाल जैसा दिखाई देता है और पत्तियां पीली हो जाती हैं।

रोग

फोमाप्सिस झुलसा या फल सड़न

पत्तियों पर भूरे रंग के गोल व लंबे दाग दिखाई देते हैं। फलों पर धब्बे पड़ जाते हैं, जिनमें बाद में सड़न होने लगती है। पौधशाला में इसका आक्रमण होने पर गलन जैसी स्थिति पैदा होती है।

छोटी पत्ती रोग

इसका विशिष्ट लक्षण पत्तियों तथा डंठल व तने के गांठों के बीच का हिस्सा छोटा होना है। पत्तियां संकीर्ण, मुलायम, चिकनी व पीली पड़ जाती हैं।

स्केलेरेटोनिया झुलसा

टहनियां ऊपर से मुख्य तने की ओर नीचे की तरफ कमजोर पड़ जाती हैं। गंभीर स्थिति में जोड़ों के निकट फफूंद लग जाती है।

सूत्रकृमि

सूत्रकृमि के आक्रमण से पौधों का विकास नहीं हो पाता एवं जड़ों में गांठें पड़ जाती हैं।

कीट प्रबंधन

नर्सरी की स्थापना

- जलभराव से बचने और अच्छे जल निकास के लिए हमेशा जमीन की सतह से 10-15 सें.मी. की ऊंचाई पर नर्सरी बेड तैयार करें।
- मई-जून में तीन सप्ताह के लिए नर्सरी बेड को धूप में शोधित करने के लिए 45 गेज (0.45 मि.मी.) की पॉलीथीन शीट से ढक दें। इससे मृदा के कीट, मृदाजनित उकठा तथा सूत्रकृमि जैसे रोगों को कम किया जा सके। ध्यान रखा जाना चाहिए कि धूप शोधन करने के लिए मृदा में पर्याप्त नमी मौजूद हो।
- तीन कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद में 250 ग्राम ट्राईकोडर्मा विरडी मिलाकर संवर्धन के लिए लगभग सात दिनों के लिए छोड़ दें। सात दिनों के बाद मृदा में 3 वर्ग मीटर की क्यारी में मिला दें।

फल सड़न रोग से ग्रसित बैंगन

मुख्य सुझाव

क्या करें

- फलों की कम अंतराल पर तुड़ाई करने से फलत अधिक
- खेत की स्वच्छता
- समय पर बुआई
- बीज बोने से पहले उपचारित करना आवश्यक
- प्रमाणित संस्थानों या विश्वसनीय स्रोतों से ही बीज का क्रय
- नर्सरी हमेशा खेत के किनारे लगायें जहां पर पर्याप्त धूप रहती हो और पेड़ की छाया न हो
- प्रत्येक वर्ष नर्सरी नयी जगह पर बनानी चाहिए, जिससे कीटाणु व रोगजनक की संख्या अधिक न हो
- हमेशा ताजा तैयार किए गए नीम के बीज के गूदे के सत्त का उपयोग
- आवश्यकतानुसार ही कीटनाशकों का प्रयोग
- गर्मी के दिनों में बैंगन के फल आने के 8-10 दिनों बाद तुड़ाई
- रोग प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग

क्या न करें

- खेत में पानी का जमाव न हो
- कीटनाशक का प्रयोग ज्यादा न करें
- एक ही कीटनाशक लगातार न दोहरायें
- सब्जियों पर मोनोक्रोटोफॉस जैसे खतरनाक कीटनाशक का प्रयोग करने से बचें
- कीटनाशकों के प्रयोग के बाद 3-4 दिनों तक फल को न तोड़ें

कीटनाशकों के उपयोग से समस्याएं

कीटों के कारण होने वाले नुकसान को कम करने के लिए बैंगन पर कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है:

- रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से प्रतिरोध, पुनरूत्थान, पर्यावरण प्रदूषण, उपयोगी पशुवर्ग और वनस्पति की तबाही की समस्या
- सब्जियां कम अंतराल पर तोड़ी जाती हैं, तो उनमें कीटनाशक के अवशेष उच्च स्तर पर बाकी रह जाते हैं। ये उपभोक्ताओं के लिए बेहद खतरनाक
- कीटनाशकों के लगातार प्रयोग से मृदा की उर्वरता में कमी

- हाइब्रिड 321 जैसे लोकप्रिय संकरों की बुआई जुलाई के पहले सप्ताह में होनी चाहिए। बुआई के पहले ट्राईकोडर्मा विरडी 4 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। निराई समय-समय पर करनी चाहिए तथा संक्रमित पौधों को नर्सरी से बाहर कर देना चाहिए।

बचाव

- चूसने वाले कीटों के खिलाफ 5 प्रतिशत नीम की खली के सत्त का 2-3 बार छिड़काव करें।
- नीम सत्त के छिड़काव से तनाछेदक कीट के प्रकोप को कम किया जा सकता है। नीम का 2 प्रतिशत तेल सहायक होता है। यदि टिड्डों और चूसने वाले कीटों का संक्रमण अब भी निर्धारित संख्या से ऊपर हो तो प्रति हैक्टर 150 मि.ली. की दर से इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. का प्रयोग करें।
- हरी खाद का प्रयोग, पॉलीथीन के साथ आधी सड़ी घास, ब्लीचिंग पाउडर के साथ मिट्टी डालना जीवाणुजनित उकठा रोग का संक्रमण कम कर देता है।
- तना एवं फलछेदक की निगरानी और बड़े पैमाने पर उन्हें फंसाने के लिए प्रति एकड़ 5 फेरोमोन ट्रैप स्थापित किए जाने चाहिए। हर 15-20 दिनों के अंतराल पर कीटों को आकर्षित करने का चारा बदलें।
- तना एवं फलछेदक के नाश के लिए प्रति सप्ताह एक से डेढ़ लाख प्रति हैक्टर की दर से अंडनाशक टी. क्रुसिलेंसिस छोड़ें।
- सूत्रकृमि और छेदक के नुकसान को रोकने के लिए मिट्टी में 250 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से (दो भागों में) पौधों की पत्तियों पर पौधा लगाने

छोटी पत्ती रोग से प्रभावित बैंगन की फसल

के 25 और 60 दिनों बाद डालें। तापमान 30^0 सेल्सियस से अधिक हो या हवा का भारी वेग हो तो नीम केक का इस्तेमाल न करें। प्रतिरोधी किस्में जैसे *लोकल बैंगलोर, एम. 96, मुक्ता केशी, व्हाइट लांग* आदि का प्रयोग करें। इसके अतिरिक्त फोमोप्सिस झुलसा व बैक्टीरियल झुलसा रोग के लिए प्रतिरोधी किस्म जैसे-*पंत सम्राट*, माहो प्रतिरोधी किस्म *अन्नामलई*, छोटी पत्ती रोग प्रतिरोधी किस्म अर्का शील व *मंजरी गोटा*, फोमोप्सिस झुलसा प्रतिरोधी किस्म *पूसा भैरव* व *पूसा अनुपम* आदि का चयन करें।

- बैंगन की कुछ पंक्तियों के बाद गेंदे की कुछ पंक्तियां लगाने से कीटों का आक्रमण कम हो जाता है।
- बैंगन की सघन खेती से छेदक और उकठा का अधिक संक्रमण होता है। इसीलिए गैर कंदीय फसलों द्वारा फसल बदलने का पालन किया जाना चाहिए।
- समय-समय पर अंडे, लार्वा और हड्डा भृंग के वयस्कों को इकट्ठा कर नष्ट करना चाहिए।
- समय-समय पर पर्ण कुंचन एवं छोटी पत्ती रोग से प्रभावित पौधों को बाहर निकाल दें।

हिमाचल प्रदेश में बंदगोभी का बीजोत्पादन

सीमा ठाकुर, राजेश ठाकुर और **देविंदर कुमार मेहता**
कृषि विज्ञान केन्द्र, (सोलन), डा. यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन (हिमाचल प्रदेश)

हिमाचल प्रदेश की जलवायु एवं भौगोलिक परिस्थितियां सभी प्रकार की सब्जियों की खेती तथा बीजोत्पादन के लिए अनुकूल हैं। प्रदेश के मध्यवर्ती एवं ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में उगाई जाने वाली बेमौसमी सब्जियां देश के अन्य राज्यों में अपने रंग, स्वाद, सुगंध एवं कुरकुरेपन के लिए काफी लोकप्रिय हैं। ये सब्जियां ऐसे समय मण्डियों में आती हैं, जबकि मैदानी क्षेत्रों में इनका उत्पादन नहीं होता है। इससे मण्डियों में हिमाचल के किसान अच्छी आय अर्जित कर रहे हैं। इसके फलस्वरूप किसानों का जीवनस्तर ऊंचा उठ रहा है। किन्नौर की जलवायु शीतोष्ण सब्जियों के बीजोत्पादन के लिए वरदान है। यहां पर हो रहे बंदगोभी, फूलगोभी, शलजम, गाजर, चुकंदर और चिकोरी के बीजोत्पादन ने विश्व में काफी नाम कमाया है। हिमाचल प्रदेश में बंदगोभी का एक महत्वपूर्ण स्थान है।

बंदगोभी ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों की एक प्रमुख नकदी फसल है। किन्नौर में इसको फलदार पौधों के बीच में अंत: फसलीकरण करके भी उगाया जाता है। इसके बीजोत्पादन के लिए ठंडे वातावरण की जरूरत होती है, जो किन्नौर के ऊंचाई वाले क्षेत्रों में पर्याप्त मात्रा में मिलता है। किन्नौर, बंदगोभी का बीजोत्पादन करने में अपनी गुणवत्ता के लिए विश्वभर में प्रसिद्ध है। बेरोजगार युवक और किसान इसका बीजोत्पादन करके अच्छा लाभ अर्जित कर सकते हैं। इसके बीजोत्पादन के लिए उचित तकनीक निम्नलिखित है:

- पौधशाला बनाने के लिए धूप वाली जगह का चुनाव करें। पेड़ों के आसपास या छांव वाली जगह में पौध उत्पादन न करें। व्यावसायिक तौर पर नर्सरी उत्पादन सड़क के आसपास करने का प्रयत्न करें।
- प्रत्येक दो वर्ष बाद नर्सरी उत्पादन की जगह को बदलें। एक ही जगह पर नर्सरी उत्पादन से भूमि में संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है।
- पौधशाला की मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में जैविक पदार्थ डालें।
- क्यारी की लंबाई साधारणत: तीन मीटर लंबी, एक मीटर चौड़ी तथा 15 सें.मी. ऊंची होनी चाहिए। क्यारी की लंबाई आवश्यकतानुसार घटाई या बढ़ाई जा सकती है। चौड़ाई 1 मीटर से अधिक नहीं होनी चाहिए। इस प्रकार की क्यारियों में खरपतवार निकालने तथा कृषि कार्य करने की सुविधा मिलती है।
- तीन मीटर लंबी, एक मीटर चौड़ी तथा 15 सें.मी. ऊंची क्यारी में 15-20 कि.ग्रा. गली-सड़ी गोबर की खाद तथा 100 ग्राम इफको मिश्रण खाद डालें और 15-20 ग्राम फफूंदनाशक इंडोफिल एम-45 मिलाएं।
- बीज को बोने से पूर्व किसी फफूंदनाशक दवाई जैसे कैप्टॉन या बाविस्टिन का 2-3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से प्रयोग करें।

- बीज को पक्तियों में 5 सें.मी. की दूरी पर लगाकर गोबर की खाद की पतली तह से ढक दें। बीज को 3 सें.मी. से अधिक गहरा न लगाएं। इससे बीज उगने में अधिक समय लगता है। बीज को उचित दूरी पर ही लगाएं, क्योंकि अगर बीज बहुत घना बोएंगे तो रोग का प्रकोप पौध को नुकसान पहुंचाएगा।
- क्यारी को सूखी घास या पॉलीथीन से ढक दें।
- तापमान कम हो तो एक बार पौध की सिंचाई करें। अगर तापमान अधिक हो तो प्रात: और सायं दो बार क्यारियों की सिंचाई करें।
- बीज का अंकुरण होने पर सूखी घास या पॉलीथीन को उठा लें। अगर ठंड उस समय ज्यादा रहती है तो रात में पौध को उससे ढक दें।
- रोग के लगने पर पौध में 0.25 प्रतिशत इंडोफिल एम-45+0.1+बाविस्टिन (2.5 ग्राम इंडोफिल एम-45 तथा 1 ग्राम बाविस्टिन प्रति लीटर) की दर से घोल बनाकर सिंचाई करें।
- जब पौधे 8-10 सें.मी. ऊंचे हो जाएं तो 0.3 प्रतिशत यूरिया (3 ग्राम/लीटर) के घोल का छिड़काव करें। यूरिया की मात्रा 3 ग्राम से अधिक नहीं होनी चाहिए।
- हर सप्ताह खरपतवार निकालें तथा हल्की गुड़ाई करें।
- चार से छ: सप्ताह में पौधे जब 12-13 सें.मी. ऊंचे हो जाएं तो रोपने योग्य हो जाते हैं।
- पौध को उखाड़ने से 3-4 दिनों पूर्व सिंचाई न करें। परंतु पौध उखाड़ने वाले

लाभकारी बंदगोभी की खेती

उन्नत किस्में

अगेती किस्में

- **प्राईड ऑफ इण्डिया:** तना छोटा, 4-5 बाहरी पत्ते, गहरे हरे गोल बंद, छोटे से मध्य 1-2 कि.ग्रा. वजन वाले, पौध रोपण से 70-80 दिनों में फसल तैयार, औसत उपज 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टर, सभी क्षेत्रों के लिए उपयुक्त
- **गोल्डन एकड़:** पौधा छोटा, बाहरी पत्ते खुले हुए, गोल बंद, बंद का वजन 1.0-1.5 कि.ग्रा., 60-70 दिनों में तैयार। औसत उपज 225-250 क्विंटल प्रति हैक्टर
- **पूसा मुक्ता:** यह गोल, ठोस शीर्ष और हल्के हरे रंग की किस्म है। यह 85-90 दिनों में तैयार हो जाती है और प्राईड ऑफ इण्डिया से 7 दिनों पहले तैयार हो जाती है। इसके पत्तों के सिरे लहरदार होते हैं, जो इसकी महत्वपूर्ण पहचान है और यह काला सड़न रोग प्रतिरोधी है।

पछेती किस्में

- **पूसा ड्रम हैड:** पछेती प्रजाति, मध्य लंबाई वाला तना, चपटे हरे व बड़े आकार के बंद, हल्के हरे रंग के ऊंचे क्षेत्रों में 3-5 कि.ग्रा. बंद, 110-120 दिनों में तैयार
- **नर्सरी बीजाई का समय:** ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में बंदगोभी के बीजोत्पादन के लिए नर्सरी बीजाई का उपयुक्त समय 15 जून से 15 जुलाई तक है। बीज रोपण के समय मृदा का तापमान 12-16^0 सेल्सियस के बीच हो तो बीज का अंकुरण अच्छा होता है। नर्सरी की बीजाई घनी न करें, इससे कमरतोड़ रोग का प्रकोप ज्यादा होता है। स्वस्थ पौध उत्पादन के लिए सही तकनीक का ज्ञान होना भी अति आवश्यक है, जिसमें कम लागत में अच्छा मुनाफा संभव

पहाड़ी क्षेत्रों में अतिरिक्त आय का जरिया है बंदगोभी

दिन सिंचाई करने के आधे घंटे के बाद ही पौध को उखाड़ें।

- स्वस्थ पौध का दोपहर बाद रोपण करें। रोपाई के तुरन्त बाद सिंचाई करें।

सिंचाई

बंदगोभी के खेत में साधारणत: मृदा का नम रहना आवश्यक है। बंद निर्माण होने के पश्चात अनियमित नमी के कारण बंदगोभी के बंद फट जाते हैं। इसलिए फसल में साधारण नमी की समरूपता बनाए रखने के लिए विशेष ध्यान देना अनिवार्य है।

मिट्टी चढ़ाना

रोपण के तीन-चार सप्ताह बाद मिट्टी चढ़ानी चाहिए। क्योंकि बंदगोभी की जड़ें

कम गहरी होती हैं। इसीलिए मिट्टी चढ़ाना लाभदायक रहता है।

भंडारण

किन्नौर में, जहां बर्फ बहुत अधिक पड़ती है, छंटाई किए हुए बंदों को 2×1 मीटर की खेती में बाहर के खुले पत्तों को निकालकर एक परत के रूप में रखा जाता है। दोनों ओर वायुगमन के लिए पीवीसी पाइप के टुकड़े डाले जाते हैं। ध्यान रखने योग्य बात है कि पाइप का हिस्सा बंद को नहीं छूना चाहिए। अगर वायुगमन मार्ग अवरुद्ध हो जाता है तो भंडारण के समय बंदों के सड़ने की मात्रा बढ़ जाती है। इसके बाद फसल को चादरों से या फट्टों से ढक दिया जाता है। चादरों या फट्टों पर 15 सें.मी. मोटी मिट्टी की परत चढ़ाई जाती है। जनवरी या फरवरी में जब बर्फ थोड़ी पिघलने लगे तब एक बार खोलकर जांच लेनी चाहिए कि वायुगमन का मार्ग ठीक है या नहीं।

बंद रोपण

मार्च-अप्रैल में जब बर्फ पिघलनी शुरू होती है तब बंदों को खेत से निकालकर पुनः तैयार खेत में रोपण किया जाता है। बंद रोपण करने से पहले बाहर के खुले पत्ते निकाल लेने चाहिए। इसके बाद बंदों को बीजोत्पादन के लिए 45 सें.मी. पंक्ति से पंक्ति तथा 45 सें.मी. बंद से बंद की दूरी रखते हुए तैयार खेत में रोप दें। इसके बाद बसन्त ऋतु के आरंभ में चाकू से क्रॉस कट लगभग 3 सें.मी. गहरा लगाने से फूल के डंठल निकल आते हैं।

बंदगोभी के बीजों की भारी मांग

खाद एवं उर्वरक

बीजोत्पादन के लिए पुनः खाद एवं उर्वरकों का निवेश आवश्यक है।

गोबर की खाद, सुपर फॉस्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश की पूरी मात्रा बंद रोपण से पूर्व खेत में डाली जाती है। कैन को तीन बराबर भागों में रोपण से एक माह बाद, कल्ले निकलने पर तथा फूलने पर डालें। समय पर खरपतवार निकालें तथा आवश्यकतानुसार सिंचाई करें।

दूरी

बीज प्राप्त करने के लिए अन्य किस्मों से फसल को 1000 मीटर से 1600 मीटर की दूरी पर रखें।

बीज प्राप्ति

किन्नौर में अगस्त में फलियां पककर तैयार हो जाती हैं। जब फलियां भूरी-पीले रंग की हो जाएं तो शाखा सहित काट लें। पूर्ण परिपक्व होने के लिए लगभग एक सप्ताह तक ढेर लगाकर रखें तथा 2-3 दिनों के अंतर पर टहनियों को ऊपर-नीचे करते रहें। पूरा सूख जाने पर बीज को अलग करके सुखा लें।

अच्छी तरह से साफ किए हुए बीजों को धूप में सुखाना चाहिए, जिससे उनमें नमी की मात्रा कम से कम रहे। बीज को थैलियों में बंद करके ठंडी जगह पर रखना चाहिए। ■

रोपण कैसे करें

- **बीज की मात्रा:** 500-700 ग्राम/हैक्टर (40-65 ग्राम/बीघा)
- **भूमि की तैयारी:** बंदगोभी विभिन्न प्रकार की मृदा में उगाई जाती है। पछेती किस्म की बंदगोभी के लिए भारी मृदा वाली भूमि सर्वोत्तम मानी गई है। अगेती किस्मों के लिए रेतीली दोमट मृदा सर्वश्रेष्ठ है। मृदा को अच्छी तरह से दो-तीन बार जोतकर भुरभुरा करना चाहिए। खेत में पानी पहुंचाने तथा अतिरिक्त जल निकास की उचित व्यवस्था पहले ही कर लेनी चाहिए।
- **पौध रोपण:** जब पौधे 4-5 सप्ताह के (10-12 सें.मी.) हो जाएं तो इनकी रोपाई सायंकाल में करें। रोपण के पश्चात तुरन्त सिंचाई करें। पौधों को उचित फासले पर लगाएं, जो कि निम्नलिखित है:
- **अगेती किस्म:** 45 × 30 सें.मी.
- **पछेती किस्म:** 60 × 30 सें.मी.

खाद एवं उर्वरक

	प्रति बीघा
गोबर की खाद	16 क्विंटल
कैन	40 कि.ग्रा.
सुपर फॉस्फेट	50 कि.ग्रा.
म्यूरेट ऑफ पोटाश	7 कि.ग्रा.

गोबर की खाद, सुपर फॉस्फेट और म्यूरेट ऑफ पोटाश की सारी मात्रा खेत तैयार करते समय और कैन की मात्रा तीन बराबर भागों में बांटकर पहल मात्रा खेत तैयार करते समय, दूसरी पौध रोपण के एक महीने बाद और तीसरी बंद बनने की अवस्था में डालें।

जामुन (*सिजिगियम कमिनी* एल.), मर्टेस परिवार का सदाबहार और उष्णकटिबंधीय वृक्ष है। यह भारत और इंडोनेशिया का मूल वृक्ष है। यह मलेशिया, म्यांमार, पाकिस्तान और अफगानिस्तान सहित दक्षिणपूर्व एशिया के अन्य देशों में भी उगाया जाता है। यह बांग्लादेश, नेपाल, श्रीलंका, मलेशिया, फिलीपींस, इंडोनेशिया इत्यादि में भी पाया जाता है। भारत में भी इसकी काफी पैदावार होती है। जामुन उत्पादन की दृष्टि से हमारे देश को विश्व में द्वितीय स्थान प्राप्त है। महाराष्ट्र राज्य जामुन उत्पादन में सर्वोपरि है। इसके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, तमिलनाडु, गुजरात, असोम आदि राज्यों में भी इसकी अच्छी पैदावार होती है। जामुन के फल सामान्यत: सीधे उपभोग में लाए जाते हैं।

जामुन से तैयार करें मूल्यवर्धित उत्पाद

प्रेरणा नाथ[1], एस.जे. काले[1] और **राम रोशन शर्मा[2]**

कोमल फल होने के कारण जामुन की भंडारण क्षमता कम होती है। अत: ये जल्दी खराब हो जाते हैं। हमारे देश में जामुन प्रसंस्करण काफी कम है, जिसे आगे बढ़ाने की आवश्यकता है। इस संदर्भ में बागवानी फसल प्रसंस्करण प्रभाग, भाकृअनुप-केन्द्रीय कटाई उपरान्त अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, अबोहर, पंजाब के एग्रो प्रसंस्करण केन्द्र द्वारा जामुन के प्रसंस्करित उत्पादों को तैयार करने की मानकीकृत और लोकप्रिय किए जाने वाली कुछ उपयोगी तकनीकों को इस लेख में शामिल किया गया है।

जूस

जामुन का जूस गुठली समेत निकाला जाता है। इसमें गुठली और गूदे दोनों के गुण समाहित होते हैं। इसका गूदा निकालने के लिए संपूर्ण फल को सबसे पहले फ्रूट क्रशर या फ्रूट मिल की सहायता से छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लिया जाता है या पीस लिया जाता है। इसके बाद इसे हाइड्रोलिक प्रैस की मदद से दबाकर जूस निकाला जाता है तथा पाश्चुरीकृत किया जाता है। पाश्चुरीकरण की इस प्रक्रिया का तापमान 90^0 सेल्सियस होता है और इसे 2 से 3 मिनट के लिए गर्म किया जाता है। इसके पश्चात जामुन का तैयार जूस गर्म बोतलों में भरा जाता है। बोतलबंदी से पहले यह सुनिश्चित कर लें कि बोतलें अच्छी तरह से साफ एवं सूखी हों। जूस बोतलों में भरते समय तापमान 88^0 सेल्सियस से नीचे नहीं होना चाहिए तथा बोतलें भी गर्म होनी चाहिए। ऐसा करने से सभी प्रकार के सूक्ष्मजीवों से जूस को बचाया जा सकता है और खाद्य पदार्थ को सुरक्षित रखा जा सकता है। इस प्रक्रिया से जूस निकालने से सामान्य तापमान पर उसकी शेल्फ लाइफ लगभग 12 महीने हो जाती है।

जामुन पेय

संग्रहित जामुन का जूस विभिन्न मूल्यवर्धित उत्पादों में परिवर्तित किया जा सकता है और इसमें आरटीएस एवं अमृत पेय का विशेष स्थान है। मधुमेह से पीड़ित मरीजों के लिए जामुन और जामुन से बने खाद्य उत्पादों का विशेष महत्व है। इसके मूल्यवर्धित उत्पादों जैसे कि आरटीएस या अन्य पेय में कृत्रिम शर्करा एवं जायकों का भी प्रयोग किया जाता है। इस पर वैज्ञानिक समुदाय की तरफ से अनेक शोध कार्य चल रहे हैं। बोतलों को कम तापमान पर लंबे समय के लिए संग्रहित किया जाता है और सामान्य तापमान पर इन उत्पादों को 6-8 महीने तक सुरक्षित भंडारित किया जा सकता है।

तुरंत परोसनी पेय (आरटीएस)

जामुन फल के रस या गूदे से आरटीएस पेय तैयार किया जाता है, जो एक मीठा पेय है। यह एक ऐसा पेय है जिसमें अम्लता

जामुन बार

जामुन के फल से रस निकालने के उपरान्त प्राप्त गूदे से जामुन बार बनाया जाता है। गूदे को सतह पर फैलाकर उसे सूर्य की रोशनी में या ट्रे शुष्कक में सुखाया जाता है। इसके बाद इसके चौकोर टुकड़े काटकर सेलोफेन में लपेटकर भंडारित किया जाता है। यह उत्पाद दिखने में आकर्षक और खाने में खट्टा-मीठा स्वाद लिए होता है। इसको आम पापड़ की तरह लोकप्रिय किया जा सकता है। इसमें कृत्रिम शर्करा डालकर मधुमेह रोगियों के लिए एक अच्छा स्वास्थ्यवर्द्धक विकल्प तैयार किया जा सकता है।

[1]बागवानी फसल प्रसंस्करण प्रभाग, भाकृअनुप-केन्द्रीय कटाई उपरान्त अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी संस्थान, अबोहर (पंजाब); [2]भाकृअनुप-खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, पूसा, नई दिल्ली-110012

0.3 प्रतिशत के अलावा 10-12 प्रतिशत रस या गूदा और 10-12 प्रतिशत कुल ठोस घुलनशील पदार्थ शामिल हैं। इस प्रसंस्करण विधि के अनुसार गूदे में चीनी, साइट्रिक एसिड और संरक्षक मिलाया जाता है। आरटीएस पेय का बिना किसी विलयन के सेवन किया जाता है।

तुरंत परोसनी पेय बनाने के लिए सामग्री

घटक	मात्रा
जामुन रस या गूदा	12 प्रतिशत
चीनी	12 प्रतिशत
पानी	76 प्रतिशत
साइट्रिक एसिड	0.28 प्रतिशत

नेक्टर

इस प्रकार के फल पेय में कम से कम 20 प्रतिशत फलों का रस या गूदा, 15 प्रतिशत कुल ठोस घुलनशील पदार्थ और 0.3 प्रतिशत अम्लता को शामिल किया जाता है। अमृत पेय को भी बिना किसी विलयन के सेवन किया जाता है।

नेक्टर बनाने के लिए सामग्री एवं मात्रा

घटक	मात्रा
जामुन रस या गूदा	1 कि.ग्रा.
चीनी	0.70 कि.ग्रा.
पानी	3.3 लीटर
साइट्रिक एसिड	7 ग्राम

जामुन क्षुधावर्द्धक

जामुन क्षुधावर्द्धक बनाने की सामग्री एवं मात्रा

सामग्री	मात्रा
जामुन रस या गूदा	25
चीनी	45
पानी	28.8
साइट्रिक एसिड	1.2
सफेद व काला नमक	0.5
काली मिर्च और अदरक	0.2

जामुन का शरबत

जामुन फल का प्रत्येक भाग है उपयोगी

जामुन से क्षुधावर्द्धक बनाने की विधि

पूरी तरह से पके हुए जामुन फल का चयन करें

↓

छंटाई और ग्रेडिंग

↓

पल्पर की मदद से सभी बीजरहित जामुन का गूदा लें

↓

चीनी का घोल तैयार करें (चीनी, पानी, काला नमक और सफेद नमक मिलाकर)

↓

साइट्रिक अम्ल, जामुन गूदा और अन्य सामग्री (पुदीना, अदरक और काली मिर्च) को आपस में मिलाएं

↓

अब इस मिश्रण को 80^0 सेल्सियस तापमान पर 2-3 मिनट के लिए गर्म करें

↓

मसालों का अर्क डालें, बैग विधि द्वारा इलायची, जीरा को मलमल के कपड़े में डालकर उबाल लें

↓

यदि आवश्यकता हो तो रंग और फ्लेवर 0.02 प्रतिशत मिलाएं

↓

परिरक्षक डालें (सोडियम बेंजोएट)

↓

बोतलबंदी एवं भण्डारण

स्क्वैश

स्क्वैश को एक केन्द्रित सिरप के रूप में परिभाषित किया गया है, जो आमतौर पर फलों का स्वाद होता है। इसको फलों का रस, पानी, चीनी या चीनी विकल्प (प्राकृतिक/सिंथेटिक/पौधे व्युत्पन्न/कृत्रिम मधुरता) के साथ मिश्रित करके बनाया जाता है। स्क्वैश, फल पेय का एक प्रकार है जिसमें 25 प्रतिशत फलों का रस या गूदा होता है और लगभग 40-50 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस होते हैं। इसमें एक प्रतिशत अम्लता और 350 पीपीएम सल्फर डाईऑक्साइड या 600 पीपीएम सोडियम बेंजाएट भी होता है।

रंगीन फल और सब्जियों से बने मूल्यवर्धित उत्पादों में पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट का प्रयोग नहीं किया जाता क्योंकि उसके उपयोग से श्वेतन हो जाता है। बाजार में उपलब्ध विभिन्न फलों के स्क्वैश में परिरक्षकों जैसे कि पोटेशियम

मधुमेह रोग में लाभकारी है जामुन का सेवन

जामुन जेली

जामुन फल के रस से जेली तैयार की जाती है। जामुन एक रंगीन फल है और एंथसायनिन की अधिकता के कारण इसकी जेली अत्यन्त आकर्षक रंगयुक्त होती है, इसका स्वाद भी उत्कृष्ट है। अपने आकर्षक रंग के कारण यह सबको और खासकर बच्चों को बहुत ही भाती है। उच्च मात्रा में फेनोलिक्स तथा एंथोसायनिन के कारण यह स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक है।

जामुन का जूस

सोर्बेट या सल्फाइट डालकर बेचा जाता है क्योंकि यह अलमारियों में संग्रहित होने के लिए बनाया जाता है। उचित चीनी, अम्ल संतुलन और परिरक्षकों के कारण इन खाद्य पदार्थों की शेल्फ लाइफ अच्छी होती है। व्यावसायिक स्क्वैश में खाद्य-रंग और सुवास (वैकल्पिक) भी हो सकते हैं, लेकिन घर में बनाये गए स्क्वैश में रंग और सुवास स्वैच्छिक होते हैं। कुछ पारंपरिक स्क्वैशों में हर्बल अर्क भी शामिल हो सकते हैं, जैसे-अदरक का अर्क।

जामुन शर्बत बनाने की सामग्री एवं मात्रा

घटक	मात्रा
जामुन रस या गूदा	1 कि.ग्रा.
चीनी	1.80 कि.ग्रा.
साइट्रिक एसिड	15 ग्राम
पानी	1.0 लीटर

अन्य मूल्यवर्धित उत्पाद

पेय पदार्थों के अलावा जामुन से कई मूल्यवर्धित उत्पाद बनाये जाते हैं जैसे कि जैम जेली, फ्रूट बार, प्रोबायोटिक पेय, जामुन चाय आदि। ये सभी उत्पाद स्फूर्ति से परिपूर्ण होते हैं तथा शरीर के लिए लाभदायक होते हैं। जामुन एंथोसायनिन का अच्छा स्रोत है इसलिए इससे बने उत्पाद भी स्वास्थ्यवर्द्धक होते हैं। एंथोसायनिन की उच्च प्रतिऑक्सीकारक क्षमता होने के कारण इससे बने उत्पाद अथवा ताजा फल का सेवन मानव शरीर के लिए काफी लाभदायक होता है।

जामुन बीज का चूर्ण

जामुन के फल ही नहीं अपितु बीज भी काफी उपयोगी होते हैं। इसके बीजों का उपयोग विभिन्न प्रकार की दवाओं को बनाने में किया जाता है। प्राचीन समय से दवा बनाने में इसकी गुठलियों का प्रयोग किया जाता रहा है। विशेषत: मधुमेह रोग के लिए इसका सेवन अत्यंत लाभकारी बताया गया है। इसके

जामुन के बीज

जामुन शरबत बनाने की विधि

पूरी तरह से पके हुए जामुन फल का चयन करें

↓

छंटाई और ग्रेडिंग

↓

धोएं और साफ करें

↓

पल्पर की मदद से बीज सहित जामुन का गूदा लें

↓

चीनी का घोल तैयार करें (1 प्रतिशत साइट्रिक अम्ल)

↓

अब इस मिश्रण को 80^0 सेल्सियस तापमान पर 2-3 मिनट के लिए गर्म करें

↓

45^0-50^0 सेल्सियस तापमान पर ठंडा करें

↓

यदि आवश्यकता हो तो रंग और फ्लेवर 0.02 प्रतिशत मिलाएं

↓

परिरक्षक डालें (सोडियम बेंजोएट)

↓

बोतलबंदी एवं भण्डारण

जामुन बीज पाउडर

बीज में उच्च मात्रा में रेशा, प्रोटीन तथा फिनोलिक्स पाये जाते हैं, जिनका औषधीय उपयोग है। जामुन के बीजों को सुखाकर पाउडर बनाया जाता है। इसे बनाने के लिए ताजा जामुन के बीज लें। ये गूदे समेत या गूदारहित हो सकते हैं। इन्हें अच्छी तरह से धो लें तथा ट्रे शुष्कक में 55^0 सेल्सियस पर सुखाएं। गुठलियों को तब तक सुखाना चाहिए जब तक इनकी नमी 7 से 8 प्रतिशत न रह जाए।

सूखने के बाद इन्हें ठंडा कर मिक्सर की सहायता से पाउडर बना लें और किसी नमीरहित जगह पर भंडारित करें। सुबह और शाम एक चम्मच मात्रा का खाली पेट सादे पानी से सेवन करें और लाभ पाएं। जामुन के बीज में उपस्थित रासायनिक घटकों को आगे दर्शाया गया है। जामुन पाउडर कैल्शियम और विटामिन का एक समृद्ध स्रोत है। प्रतिऑक्सीकारक गुणों से भरपूर पाउडर मानव शरीर से विषाक्त पदार्थों को निकालने में सहायक होता है। भारतीय, चीनी और यूनानी चिकित्सा में मधुमेह की दवाओं को बनाने में यह पाउडर उपयोग किया जाता है। इसके इस्तेमाल से शरीर में शर्करा की मात्रा को नियंत्रित किया जाता है। अत: प्राचीन समय से यह मधुमेह के रोग से लड़ने के लिए रामबाण इलाज माना जाता है। जामुन की छाल में एंटीहेल्मेटिक गुण पाए जाते हैं। इसकी छाल में अन्य हर्बल पदार्थ मिलाकर जामुन आधारित चाय तैयार की जाती है। इस चाय का इस्तेमाल मूत्र पथ के संक्रमण एवं अन्य विकारों के उपचार में काफी लाभदायक है।

जामुन के बीज में रासायनिक घटकों की मात्रा

घटक	मात्रा (प्रतिशत)
कार्बोहाइड्रेट	70-75
प्रोटीन	6.5-7.0
वसा	0.3-0.5
रेशा	2.5-3.0
नमी	45-50
राख	1.8-2.0

जामुन की गिनती व्यावसायिक फसलों में की जाती है। अपने औषधीय गुणों के कारण इसका महत्व अन्य व्यावसायिक फसलों से कहीं अधिक है। जामुन का प्रसंस्करण लगभग नगण्य है। इस क्षेत्र में गंभीर प्रयासों की आवश्यकता है। ■

जामुन की नई किस्म 'जामवंत', मधुमेह नियंत्रित करने में मददगार

दो दशक के अथक प्रयासों के बाद भाकृअनुप-केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, लखनऊ के वैज्ञानिकों ने जामुन की नई किस्म **'जामवंत'** विकसित की है। यह मधुमेह की रोकथाम में कारगर तथा एंटीऑक्सीडेंट गुणों से भरपूर है। इसमें कसैलापन नहीं है और 90 से 92 प्रतिशत तक गूदा होता है। इसकी गुठली बहुत छोटी है।

जामुन के विशाल पेड़ की जगह इसके पेड़ को बौना और सघन शाखाओं वाला बनाया गया है। गुच्छों में फलने वाले इसके फल पकने पर गहरे बैंगनी रंग के हो जाते हैं। इस किस्म को व्यावसायिक इस्तेमाल के लिए जारी कर दिया गया है।

मधुमेहरोधी और कई अन्य औषधीय गुणों से भरपूर होने के कारण मधुमेह पीड़ितों के लिए जामुन मई से जुलाई के दौरान दैनिक उपयोग का फल बन सकता है। जामुन की नई किस्म 'जामवंत' एंटीडायबिटिक एवं बायोएक्टिव यौगिकों से भरपूर है। आकर्षक गहरे बैंगनी रंग के साथ बड़े आकार के फलों के गुच्छे इस किस्म की विशेषता है। इसके फल का औसत वजन 24.05 ग्राम होता है। इसके गूदे में अपेक्षाकृत उच्च एस्कॉर्बिक एसिड (49.88 मि.ली. प्रति 100 ग्राम) और कुल एंटीऑक्सीडेंट मूल्य (38.30 मि.ली.) पाया जाता है, जो इसको पोषक तत्वों में धनी बनाता है। इसके फल जून के दूसरे और तीसरे सप्ताह से निकलने शुरू होते हैं। *'जामवंत'* ताजे फल और प्रसंस्करण दोनों के लिए उपयुक्त किस्म है। इसका अधिक गूदा एवं छोटी गुठली उपभोक्ताओं को आकर्षित करती है और इसका बेहतर मूल्य मिलता है।

ग्राफ्टिंग तकनीक के कारण इसके पेड़ पांच साल के भीतर फल देने लगते हैं। इसके पेड़ को छोटा रखने की तकनीक संस्थान में विकसित की गई है, जो इन ग्राफ्टेड पौधों को वांछनीय ऊंचाई पर बनाए रखने में मदद करती है। फल सामान्य ऊंचाई पर तोड़ने के लिए सामान्य व्यक्ति की पहुंच में होते हैं। ज्यादातर जामुन के पेड़ विशाल होते हैं। शाखाओं को हिलाकर या गिराए गए फलों को एकत्र करना मौजूदा प्रथा है, लेकिन 'जामवंत' के छोटे पेड़ों से कोई भी आसानी से फल तोड़ सकता है और जमीन पर गिरने के कारण फलों की बर्बादी नहीं होती है। ■

फायदा

करौंदे से लें दोहरा लाभ

महेश चौधरी[1], अनोप कुमारी[2] और रवि कुमार मीणा[3]

करौंदे का पौधा झाड़ीनुमा, सदाबहार प्रवृति का तथा छोटी से मध्यम ऊंचाई (2-4 मीटर) का होता है। शाखाओं पर अत्यन्त नुकीले कांटे पाये जाते हैं, जिसके कारण अंग्रेजी में इसे 'क्राइस्ट थॉर्न' का नाम दिया गया है। इसके तने एवं शाखाओं को तोड़ने से दूध जैसा सफेद चिपचिपा पदार्थ निकलता है। टहनी के शीर्ष पर अथवा पत्तियों के कक्ष में सफेद या गुलाबी रंग के सुगन्धित फूल आते हैं, जो कि आकार में छोटे (3-5 सें.मी.) एवं गुच्छों में निकलते हैं। फल हरे अथवा सफेद पृष्ठभूमि पर गुलाबी आभा लिए हुये गुच्छों में लगते हैं। अपरिपक्व फलों का उपयोग सब्जी, अचार व चटनी बनाने में और पके फलों का विभिन्न मूल्य संवर्धित उत्पादों जैसे-जैम, जेली, कैंडी, मुरब्बा, अचार इत्यादि तैयार करने में किया जाता है।

करौंदा एक झाड़ीनुमा पौधा है, जिसका वैज्ञानिक नाम कैरिसा कैरेंडस है। यह एपोसाइनेसी कुल का एक महत्वपूर्ण पौधा है एवं इसका उत्पत्ति स्थान भारत माना जाता है। भारत के अलावा यह मलेशिया, दक्षिण अफ्रीका, ऑस्ट्रेलिया, श्रीलंका, बांग्लादेश व म्यांमार में भी पाया जाता है। देश में उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान, गुजरात, बिहार व हिमालय क्षेत्रों में इसे उगाया जाता है। अधिकतर क्षेत्रों में यह जंगली रूप में ही पाया जाता है। कुछ क्षेत्र ऐसे भी हैं जहां इसे व्यावसायिक रूप से उगाया जाता है। शुष्क अथवा अर्धशुष्क क्षेत्रों में घरों के आसपास इसके 1-2 पौधे आसानी से मिल जाते हैं। लोग इसके फलों से सब्जी बनाने के अलावा शेष बचे फलों को स्थानीय बाजार में बेच देते हैं। करौंदे की फसल शुष्क क्षेत्रों में आर्थिक रूप से लाभदायक साबित हो सकती है। ऐसे क्षेत्रों में सिंचाई जल की कमी के कारण दूसरी फसलों को सफलतापूर्वक उगाना बहुत मुश्किल कार्य होता है। अर्धशुष्क क्षेत्रों में इसे अन्य फसलों के साथ अथवा खेत की जीवंत बाड़ (फेंसिंग) के रूप में लगाकर अतिरिक्त लाभ लिया जा सकता है। करौंदा 'एक पंथ दो काज वाली' कहावत को भी चरितार्थ करता है। एक तो यह खेत के चारों ओर बाड़ के रूप में लगाने से फसल की

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहपुर-शेखावटी, सीकर-332301, (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, राजस्थान); [2]कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर-नागौर (कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर-342304 राजस्थान); [3]कृषि विज्ञान केन्द्र, पदमपुर, श्रीगंगानगर (स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर, राजस्थान)

फलों से लदा करौंदे का पौधा

जंगली जानवरों से रक्षा करता है, दूसरा बाड़ के रूप में लगाये गए पौधों पर लगे फलों को बेचने से अतिरिक्त आमदनी मिल जाती है।

यह एक गैर-पारंपरिक फसल है, जो मुख्यत: वर्षा आधारित क्षेत्रों में ही उगायी जाती है। एक बार करौंदे का पौधा स्थापित होने के बाद न्यूनतम प्रबंधन एवं देखभाल में भी अच्छी उपज देता है। इसमें जल की कमी तथा सूखा सहन करने की क्षमता अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक होती है। इसके साथ ही कीट-व्याधियों का प्रकोप भी अपेक्षाकृत कम होता है। खाद-पानी की आवश्यकता भी इसे कम होती है। पोषक तत्वों व औषधीय गुणों के कारण बाजार में इसके फलों व तैयार उत्पादों की मांग में दिनों-दिन इजाफा होता जा रहा है। सही ढंग से इसकी खेती की जाये जो अच्छा उत्पादन प्राप्त करके अधिक मुनाफा कमाया जा सकता है।

पोषक तत्वों व औषधीय गुणों से भरपूर

करौंदे का फल आकर्षक, रंगीन और बेरी किस्म का होता है। फल की बाह्य एवं मध्य फलभित्ती ही खायी जाती है। इसके फल का 90 प्रतिशत भाग खाया जाता है। फल स्वाद में खट्टे एवं कसैले होते हैं। इसके फलों में अन्य फलों की तुलना में लौह तत्व प्रचुर मात्रा में पाया जाता है इसलिए

सारणी 1. करौंदा में पाये जाने वाले पोषक तत्व

पोषक तत्व	पोषक तत्व मात्रा (प्रति 100 ग्राम में)	
	ताजे फलों में	सूखे फलों में
नमी (प्रतिशत)	91	18.2
प्रोटीन (प्रतिशत)	1.1	2.3
कार्बोहाइड्रेट (प्रतिशत)	2.9	67.1
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	2.1	160
फॉस्फोरस (मि.ग्रा.)	28	60
लोहा (मि.ग्रा.)	-	39
विटामिन-सी (मि.ग्रा.)	250-500	1
खनिज (प्रतिशत)	-	2.8
वसा (प्रतिशत)	2.9	9.6

करौंदे की विशेषताएं

- लगभग सभी प्रकार की मृदाओं (बंजर, ऊसर, कंकरीली-पथरीली, लवणीय) में आसानी से पैदावार
- पानी की बहुत कम आवश्यकता जिसके कारण शुष्क और अर्धशुष्क क्षेत्रों के लिए सर्वोत्तम
- कीट व रोगों का बहुत कम प्रभाव
- पोषक तत्वों व औषधीय गुणों से भरपूर फल
- विभिन्न फसलों की सुरक्षा प्रदान करने में बाड़ के रूप में अत्यन्त उपयोगी
- छोटे तथा सीमान्त किसानों के लिए लाभकारी
- गृहवाटिका में पोषण की दृष्टि से भी उपयुक्त
- मिट्टी व जल संरक्षण में मददगार
- मूल्य संवर्धित उत्पादों से अधिक मुनाफा

कभी-कभी एनीमिया के उपचार में इसका इस्तेमाल होता है। करौंदे का फल हर उम्र के व्यक्तियों के लिए लाभकारी है। इसमें लौह तत्व के अलावा कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, कैल्शियम, फॉस्फोरस एवं विटामिन-सी भी भरपूर मात्रा में होता है। फलों में थायमिन (बी1), राइबोफ्लेविन (बी2), पैंटोथैनिक अम्ल (बी5), पाइरीडक्सीन (बी6), बायोटिन (बी7), फॉलिक अम्ल (बी9) की भी अच्छी मात्रा उपलब्ध होती है। महिलाओं एवं बच्चों के लिए भी इसका सेवन अच्छा माना गया है। फलों का पोषक मान सारणी-1 में दर्शाया गया है।

करौंदे के फलों एवं पौधे के अन्य भागों का उपयोग औषधि के रूप में किया जाता है। कच्चे फलों के सेवन से भूख बढ़ती है व पके फल पित्त दोष के उपचार में उपयोगी हैं। यह वातनाशक भी होता है। फलों को खाने से मसूड़ों से खून आना बंद हो जाता है, इसके साथ ही रक्त अल्पता में भी अत्यधिक फायदा होता है। पर्याप्त मात्रा में विटामिन-सी होने की वजह से यह स्कर्वी रोग से लड़ने में भी सहायक है। करौंदे की जड़ों के रस को लुम्बागों, छाती और गुप्त रोगों के उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है। इसकी जड़ों को पानी से साफ करके महीन पीसकर तेल के साथ अच्छी प्रकार पकाने के पश्चात घाव पर लगाने से खुजली व घाव के कीड़े समाप्त

औषधीय गुणों से भरपूर करौंदा

हो जाते हैं। इसकी पत्तियों का रस बुखार के उपचार के लिए उपयोग में लिया जाता है एवं पत्तियों का अर्क शहद के साथ चाटने पर खांसी तुरन्त ही समाप्त हो जाती है।

अधिक मुनाफे के लिए तैयार करें मूल्य संवर्धित उत्पाद

करौंदे के फल स्वाद में खट्टे होने के कारण शहरी क्षेत्रों में सामान्य तौर पर इससे सब्जी कम ही तैयार की जाती है। फलों के पकने पर इनका स्वाद हल्का खट्टा-मीठा हो जाता है, जिसके कारण इनसे तैयार उत्पादों को बहुत पसंद किया जाता है। फलों का उपयोग विभिन्न प्रकार के उत्पाद तैयार करने के लिए किया जा सकता है, जिससे अधिक लाभ मिल सके। करौंदे के परिपक्व फलों में पैक्टिन की अधिकता होती है। फलों का उपयोग जैम, जेली, मुरब्बा, कैंडी, कृत्रिम चेरी, चटनी इत्यादि परिरक्षित पदार्थ तैयार करने के लिए किया जा सकता है। आजकल इसके अधपके फलों में छिद्र करके व चीनी की चाशनी में खाने वाला रंग मिलाकर 'नकल चेरी' नामक उत्पाद तैयार किया जाता है, जिसकी मांग काफी रहती है।

मृदा

इसका पौधा सहिष्णु प्रवृति का होता है, जिसके कारण इसकी खेती लगभग सभी तरह की मृदाओं (पथरीली, चट्टानी, अनुपजाऊ) में आसानी से की जा सकती है। यह 8.5 पी-एच मान वाली ऊसर मृदाओं में भी अच्छी प्रकार फलता-फूलता

बीज द्वारा तैयार पौधे

करौंदे की बाड़

है। अच्छी पैदावार के लिए बलुई दोमट मृदा जिसमें जल निकास की व्यवस्था अच्छी हो, सर्वोत्तम होती है।

जलवायु

इसका पौधा काफी सख्त प्रवृति का होने के कारण इस पर वातावरणीय कारकों का बहुत कम असर पड़ता है। यह अधिक तपमान एवं शुष्क जलवायु को ज्यादा पसंद करता है। उष्ण तथा उपोष्ण जलवायु में इसे आसानी से उगाया जा सकता है। ऐसे क्षेत्र जहां बरसात अधिक होती है एवं जलमग्नता की स्थिति बनी रहती है, इसकी खेती के लिए अनुपयुक्त होते हैं।

नये पौधे तैयार करना

करौंदे के नये पौधे बीज एवं वानस्पतिक विधियों (कलम, लेयरिंग व कलिकायन) से तैयार किए जा सकते हैं। व्यावसायिक स्तर पर करौंदे का प्रवर्धन बीज से ही किया जाता है, परंतु बीज द्वारा तैयार पौधों में आकार, रंग, स्वाद इत्यादि में काफी भिन्नता आ जाती है। बीज द्वारा पौधे तैयार करने के लिए अच्छी तरह पके हुए फलों से जुलाई-अगस्त में बीज निकालकर यथाशीघ्र पौधशाला में बुआई कर देनी चाहिए। अधिक समय तक बीजों को रखने से उनकी अंकुरण क्षमता में कमी आ जाती है। बीजों की बुआई प्लास्टिक ट्रे अथवा पॉलीथीन बैग में की जा सकती है। बीजों द्वारा नये पौधे तैयार होने में 8-10 महीने का समय लग जाता है। वानस्पतिक विधि से तैयार पौधों में एकरूपता बनी रहती है। बीज विधि की अपेक्षा यह तकनीकी रूप से थोड़ी कठिन है और कम ही प्रयोग में ली जाती है। वानस्पतिक विधियों में कलम

काट-छांट से तैयार पौधा

करौंदे की विभिन्न किस्मों की विशेषताएं

करौंदे की किस्मों को फलों के रंग के आधार पर तीन भागों में बांटा गया है जो निम्न प्रकार से हैं:

- हरे रंग के फलों वाली किस्म
- गुलाबी रंग के फलों वाली किस्म
- सफेद रंग के फलों वाली किस्म

करौंदे की कुछ महत्वपूर्ण किस्मों का विवरण निम्न प्रकार से है:

- **पंत मनोहर:** यह किस्म गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर में विकसित की गयी है। पौधे मध्यम ऊंचाई के सघन व झाड़ीनुमा होते हैं। फल श्वेत पृष्ठभूमि पर गहरी गुलाबी आभा लिए हुए होते हैं, जिनका औसत भार 3.49 ग्राम होता है। फल में 88.27 प्रतिशत गूदा, 12.77 प्रतिशत शुष्क पदार्थ, 3.92 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस पदार्थ, 1.82 प्रतिशत खटास और उपज 27 कि.ग्रा./पौधा होती है।

गुलाबी करौंदे

- **पंत सुदर्शन:** इस किस्म का विकास भी गोविन्द बल्लभ पंत कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, पंतनगर में ही हुआ है। पौधे मध्यम ऊंचाई के एवं फल श्वेत पृष्ठभूमि पर गुलाबी आभा लिए होते हैं। फलों का औसत भार 3.46 ग्राम होता है, जिसमें औसतन 4-5 बीज पाये जाते हैं। फल में 88.47 प्रतिशत गूदा, 11.83 प्रतिशत शुष्क पदार्थ, 3.45 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस पदार्थ, 1.89 प्रतिशत खटास और उपज 29 कि.ग्रा./पौधा होती है।

सफेद करौंदे

- **पंत सुवर्णा:** इसके पौधे ऊपर की तरफ बढ़ने वाले और झाड़ीनुमा होते हैं। फल गहरी हरी पृष्ठभूमि पर हल्की भूरी आभा लिए हुये होते हैं। फलों का औसत भार 3.62 ग्राम, फल में 88.27 प्रतिशत गूदा, 12.39 प्रतिशत शुष्क पदार्थ, 3.84 प्रतिशत कुल घुलनशील ठोस पदार्थ, 2.30 प्रतिशत खटास और उपज 22 कि.ग्रा./पौधा होती है।

हरे करौंदे

- **सी.आई.एस.एच. करौंदा 11:** यह किस्म केन्द्रीय उपोष्ण उद्यान संस्थान, लखनऊ द्वारा विकसित की गयी है। फलों का औसत भार 6.0 ग्राम, लंबाई 2.3 सें.मी., गूदा 4.6 ग्राम, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 6.10 प्रतिशत, खटास 16.8 मि.ग्रा./100 ग्राम तथा एंटीऑक्सीडेंट 189.89 माइक्रोग्राम/100 मि.ली. पाया जाता है।
- **थार कमल:** यह किस्म केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र पंचमहल, गुजरात द्वारा विकसित की गयी है। फल का औसत भार 5 ग्राम, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 9-10 प्रतिशत, खटास 0.64 प्रतिशत और उपज 13 कि.ग्रा./पौधा होती है। यह किस्म कैंडी एवं जेली बनाने के लिए उपयुक्त होती है।

कोंकन बोल्ड, नरेन्द्र करौंदा-1 ये भी अधिक उपज देने वाली अन्य उन्नतशील किस्में हैं, जिनका चयन करके अच्छा उत्पादन लिया जा सकता है।

काट-छांट रहित पौधा

जल संरक्षण में मददगार हैं करौंदे

व लेयरिंग विधि अधिक सफल है। अर्ध परिपक्व कर्तन जो कि 25-30 सें.मी. लंबाई व एक सें.मी. व्यास की हो, इस उद्देश्य के लिए प्रयोग कर सकते हैं। इस कार्य के लिए बरसात का समय (जुलाई-अगस्त) उपयुक्त होता है। एयर लेयरिंग, जो कि गूटी विधि के नाम से भी जानी जाती है, द्वारा भी करौंदे के नये पौधे तैयार कर सकते हैं। जड़ों के शीघ्र फुटान के लिए तना कलम में 500 पी.पी.एम. इंडोल ब्यूटेरिक अम्ल (आई.बी.ए.) एवं गूटी विधि में 5000 पी.पी.एम. आई.बी.ए. सांद्रता के घोल का प्रयोग अवश्य करें।

पौधों का रोपण

करौंदे के पौधों को लगाने की दूरी व विधि उनके लगाने के उद्देश्य पर निर्भर करती है। व्यावसायिक उत्पादन के लिए रोपण करना है तो सर्वप्रथम खेत में से सभी छोटे झाड़ीदार पौधों को निकाल दें एवं खेत को अच्छी तरह तैयार करके समतल कर लें, उसके बाद 3 × 3 मीटर या 4 × 4 मीटर की दूरी दर से रेखांकन करके निशानदेही के लिए खूंटी लगा दें। खूंटी वाले स्थानों पर रोपण के पूर्व 45 × 45 × 45 सें.मी. आकार के गड्ढों की खुदाई का कार्य करें। गड्ढे खोदते समय ऊपर की आधी मिट्टी एक तरफ व शेष आधी मिट्टी को दूसरी तरफ डाल दें। खुदाई के पश्चात गड्ढों को 30-35 दिनों तक तेज धूप में खुला छोड़ दें, जिससे इनमें उपस्थित कीट-मकोड़े मर जायें। गड्ढा खोदते समय ऊपर की जो आधी मिट्टी अलग निकाली थी, उसमें 10-15 कि.ग्रा. अच्छी तरह सड़ी-गली गोबर की खाद मिलाकर भर दें। गड्ढों को जमीन की सतह से 10-15 सें.मी. ऊपर तक भर दें एवं कुछ समय तक उनको व्यवस्थित होने के लिए छोड़ दें। 2-3 बारिश के पश्चात जब मिट्टी नीचे बैठ जाये उसके बाद पौध रोपण का कार्य प्रारंभ करें। बाड़ के लिए करौंदे का रोपण करना हो तो पौधों के बीच की दूरी 2 फीट की ही रखें। पौधे लगाने के लिए 1 × 1 फीट आकार की नाली तैयार करके उसमें रोपण का कार्य करें।

फसलों की सुरक्षा में करौंदे का उपयोग

निराई-गुड़ाई व सिंचाई

वैसे तो करौंदे में खरपतवार प्रबंधन व निराई-गुड़ाई का ध्यान कम ही रखा जाता है, परंतु पौधों की आरम्भिक अवस्था में अच्छी बढ़वार व इसके बाद अधिक उत्पादन लेने के लिए पौधों के आसपास साफ-सफाई रखना आवश्यक होता है। खरपतवार पौधों के पोषक तत्व चुराने के साथ ही नमी की मात्रा को भी कम कर देते हैं। निराई-गुड़ाई करके समय-समय पर इनको निकालते रहना चाहिए। करौंदे की खेती प्रायः शुष्क एवं बंजर भूमि में ही की जाती है। इसके पौधों को पानी की बहुत कम आवश्यकता होती है। रोपण की प्रारंभिक अवस्था में सिंचाई करने से पौधों की मृत्युदर कम होती है। इसके साथ ही वे अच्छी तरह स्थापित हो जाते हैं। उपयुक्त नमी बनाये रखने से पौधों की बढ़वार, पुष्पन व फल वृद्धि भी अच्छी होती है।

खाद एवं उर्वरक

व्यावसायिक दृष्टिकोण से जब करौंदे का रोपण किया जाता है तो पोषण प्रबंधन बहुत आवश्यक हो जाता है। संतुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरक दिये जायें तो निश्चित रूप से पौधों की अच्छी बढ़वार के साथ ही अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। मृदा जांच के उपरान्त ही खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। करौंदे में खाद एवं उर्वरकों की मात्रा पौधे की आयु, मृदा की उर्वरता तथा फसल को दी गयी कार्बनिक खादों की मात्रा पर निर्भर करती है। पौधे की आयु के हिसाब से खाद एवं उर्वरकों की मात्रा सारणी-2 में दर्शायी गयी है।

खाद एवं पोषक तत्वों की पूर्ति के लिए गोबर अथवा कम्पोस्ट खाद, फॉस्फोरस

करौंदे की भरपूर उपज

सारणी. 2. पौधे की उम्र के अनुसार खाद एवं उर्वरकों की मात्रा

खाद एवं उर्वरक	पौधे की उम्र (वर्ष में)				
	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	तृतीय वर्ष	चतुर्थ वर्ष	पांच वर्ष बाद
गोबर की खाद (कि.ग्रा. में)	10.00	10.00	15.00	20.00	20.00
यूरिया (ग्राम में)	0.100	0.100	0.100	0.200	0.200
सुपर फॉस्फेट (ग्राम में)	-	0.300	0.300	0.400	0.400
म्यूरेट ऑफ पोटाश (ग्राम में)	-	-	0.050	0.075	0.100

और पोटाश की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा को वर्षा आरंभ होने से पहले अथवा अंत में दें व शेष नाइट्रोजन की आधी मात्रा को फूल आने के बाद दें।

पौधों में कांट-छांट

करौंदा का पौधा झाड़ीनुमा एवं कांटेदार होने के कारण अधिकतर जगहों पर बाड़ के रूप में जंगली जानवरों से रक्षा करने के लिए ही उगाया जाता है। इसके कारण कांट-छांट की आवश्यकता नहीं होती है। पौधों को गृहवाटिका में या हैज के रूप में लगाया जाता है तो आरम्भिक वर्षों में इच्छित आकार देने के लिए कांट-छांट बहुत आवश्यक हो जाती है। ताकि ये अधिक जगह को न घेरते हुए जिस उद्देश्य के लिए लगाये गए हैं वे पूर्ण कर सकें। हैज के लिए पौधे के ऊपरी हिस्से को समय-समय पर हटाते रहते हैं, जिससे पौधा घना बन सके। इसके साथ ही दिखने में भी अच्छा लगे, जबकि व्यावसायिक उद्देश्य या गृहवाटिका में लगे पौधों को जमीन की सतह से निकलने वाली 4-5 मुख्य शाखाओं को छोड़कर बाकी को काट देते हैं। इसके साथ ही जमीन की सतह से 20-30 सें.मी. ऊंचाई तक कोई शाखा नहीं रहने दें। सूखी, रोगग्रस्त एवं एक-दूसरी में उलझी शाखाओं को भी समय-समय पर निकालते रहना चाहिए। काट-छांट करने के लिए अक्टूबर से दिसंबर का समय उपयुक्त होता है। पुष्पन प्रारंभ होने के समय से लेकर फल पकने तक काट-छांट नहीं करनी चाहिए। करौंदे का तना काफी कमजोर होता है एवं बगल से शाखायें भी अधिक निकलती हैं। पौधों को प्रारंभ से ही किसी लकड़ी या डंडे की सहायता से सहारा देना आवश्यक हो जाता है, जिससे ये गिरे नहीं एवं पौधा सीधा खड़ा रहे।

फूलने व फलने का समय

करौंदे में रोपण के लगभग 3-4 वर्ष बाद फूल व फल बनने प्रारंभ हो जाते हैं। फूल व फल बनने का समय किस्म व जलवायु पर निर्भर करता है। फूल किस्मों के अनुसार फरवरी से प्रारंभ होकर अप्रैल तक आते रहते हैं, जो कि लगभग 4 महीने बाद (जून-अगस्त तक) पकने लग जाते हैं। हालांकि कच्चे फल मई माह में ही मिलने शुरू हो जाते हैं।

फलों की तुड़ाई

करौंदे के पौधों से रोपण के 3-4 वर्ष बाद फल प्राप्त होने लगते हैं। पुष्प आने के 110-120 दिनों बाद जुलाई-अगस्त में फल परिपक्व हो जाते हैं। फलों की तुड़ाई का समय उनके उपयोग के उद्देश्य पर निर्भर करता है। कम विकसित अथवा अपरिपक्व

बहुपयोगी करौंदा

फलों का उपयोग सब्जी व अचार बनाने के लिए और पके फलों का उपयोग जैम, जेली इत्यादि में होता है। इसके सभी फलों को एक साथ तोड़ना संभव नहीं होता है, क्योंकि करौंदे के फलों में एकरूपता नहीं पायी जाती है। अत: 2-3 बार में फलों की तुड़ाई की जानी चाहिए। फलों का रंग बदलना ही फलों की परिपक्वता की निशानी है। इसका पौधा झाड़ीदार होने के साथ ही कांटेयुक्त होता है। फलों की तुड़ाई सावधानीपूर्वक करनी चाहिए। सामान्य तापमान पर करौंदे के फलों को एक सप्ताह तक रख सकते हैं। कम तापमान व उचित सापेक्ष आर्द्रता पर भंडारण क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। फलों की उपज किस्म, मृदा, जलवायु, फसल प्रबंधन, इत्यादि कारकों पर निर्भर करती है। सामान्यत: एक पूर्ण विकसित पौधे से लगभग 15 से 25 कि.ग्रा. फल प्राप्त हो जाते हैं।

कीट एवं रोग

करौंदे का पौधा सख्त प्रवृति का होने के कारण कीट व रोगों से कम ही प्रभावित होता है। यही कारण है कि विपरीत परिस्थितियों में भी इसका पौधा हराभरा खड़ा रहता है। बहुत कम ही ऐसा होता है कि कोई कीट या रोग इसको नुकसान पहुंचाता है। फिर भी यदि कोई समस्या दिखाई देती है तो सही समय पर उसका निदान अवश्य करें। करौंदे को प्रभावित करने वाले कुछ महत्वपूर्ण कीट एवं रोग निम्नलिखित हैं:

- **पत्ती खाने वाली गिडार (कैटरपिलर):** यह पौधे की आरंभिक अवस्था में अधिक हानि पहुंचाती है। गिडार पौधे की नई पत्तियों को खा जाती है, जिससे पौधे की बढ़वार रुक जाती है। इसके नियंत्रण के लिए थायोडान 2 मि.ली./लीटर अथवा नुवान 1 मि.ली./लीटर पानी में घोलकर छिड़कें।
- **फल मक्खी (फ्रूटफ्लाई):** कई बार परिपक्व फल इसके द्वारा प्रभावित हो जाते हैं। मादा फल मक्खी फलों के अंदर अंडे देती हैं। इसके 2-3 दिनों बाद अंडों से पैरविहीन सफेद लटें (मैगट्स) निकलती हैं। वे फल के अंदर का गूदा खाने लगती हैं, जिसके परिणामस्वरूप फलों में सड़न पैदा हो जाती है और ये कमजोर होकर नीचे गिरने लग जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए बाग की गर्मियों में गहरी जुताई कर दें, जिससे मृदा में उपस्थित फल मक्खी के प्यूपा सतह पर आकर गर्मी के कारण नष्ट हो जायें या चिड़ियों के द्वारा खा लिए जाएं। प्रभावित फलों को इकट्ठा कर भूमि में गहरा गाड़ दें अथवा नष्ट कर दें, जिससे इनका जीवनचक्र समाप्त हो जाये। फल मक्खी को अमोनिया से बने आहार व आइसो यूजिनोल नामक रसायन आकर्षित करते हैं। इन्हें कीटनाशी के साथ मिलाकर कीटों को नष्ट किया जा सकता है।
- **श्यामव्रण रोग (एंथ्रेक्नोज):** इस रोग में पत्तियों पर काले से भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। रोगी पत्तियां गिर जाती हैं और पतली टहनियां सूखना प्रारंभ कर देती हैं। रोग की रोकथाम के लिए ताम्रयुक्त फफूंदनाशी दवाओं जैसे ब्लाइटॉक्स-50 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. को 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए।

शुष्क क्षेत्रों में बेर की बागवानी

विष्णु के. सोलंकी
कृषि कॉलेज, गंजवासौदा, जेएनकेवीवी, जबलपुर-464221 (मध्य प्रदेश)

बेर, भारत का प्राचीन लोकप्रिय फल है। यह रैमनैसी कुल से संबंधित है तथा जिजीफस जीनस के अंतर्गत आता है। वर्षा आधारित औद्यानिकी में बेर एक ऐसा फलदार पेड़ है, जो कि एक बार पूरक सिंचाई से स्थापित होने के पश्चात वर्षा के पानी पर निर्भर रहकर भी फलोत्पादन कर सकता है। यह एक बहुवर्षीय व बहुपयोगी फलदार पेड़ है। इसके फलों के अतिरिक्त पेड़ के अन्य भागों का भी आर्थिक महत्व है। इसकी पत्तियां पशुओं के लिए पौष्टिक चारा प्रदान करती हैं, जबकि इसमें प्रतिवर्ष अनिवार्य रूप से की जाने वाली कटाई-छंटाई से प्राप्त कांटेदार झाड़ियां खेतों की रक्षात्मक बाड़ बनाने व भंडारित चारे की सुरक्षा के लिए उपयोगी हैं।

फलों से लदा बेर वृक्ष

बिक्री के लिए तैयार बेर

बेर में कुछ ऐसे गुण होते हैं जिनके कारण यह शुष्क क्षेत्रों में खेती के लिए बहुत ही सफल फलदार वृक्ष है। इन्हीं गुणों के कारण इसे बारानी का बादशाह कहा जाता है। इसकी जड़ मूसलदार होती है, जो मृदा की कठोर सतह को तोड़कर काफी गहराई तक पहुंचकर निचली सतह से जल शोषित कर पौधे को स्वस्थ रखती है। अन्य फल वृक्षों की तुलना में इसके पौधों को बहुत कम पानी की आवश्यकता पड़ती है। गर्मी के मौसम में जब अन्य फल वृक्षों को सिंचाई की आवश्यकता होती है, उस समय इसकी पत्तियां झड़ जाती हैं। पौधा एक प्रकार से सुषुप्तावस्था में आ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इसमें फूल वर्षा ऋतु के बाद अगस्त-सितंबर में आते हैं एवं फल फरवरी से मार्च तक पकते हैं। इन्हीं गुणों के कारण बेर की खेती शुष्क तथा अर्धशुष्क क्षेत्रों के लिए लाभदायक है। बेर के पके ताजे फल खाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त पके फलों को सुखाकर छुआरा, कैंडी व शीतल पेय के रूप में भी उपयोग किया जाता है। पके फल में विटामिन सी, ए, बी तथा शर्करा के अतिरिक्त खनिज पदार्थ, कैल्शियम, मैग्नीशियम व जस्ता प्रचुर मात्रा में होता है।

उन्नत किस्में

अगेती किस्में: गोला, काजरी गोला। ये फल पूरे जनवरी तक उपलब्ध रहते हैं।

मध्यम किस्में: सेव, कैथली, छुआरा, दंडन, सेन्यूर-5, मुंडिया, गोमा कीर्ति इत्यादि। इनके फल मध्य जनवरी से मध्य फरवरी तक उपलब्ध रहते हैं।

पछेती किस्में: उमरान, काठा, टीकड़ी, इलायची। इनके फल फरवरी-मार्च तक उपलब्ध रहते हैं।

जलवायु

बेर, जलवायु की प्रतिकूल दशाएं सहन करने की अद्‌भुत क्षमता रखता है। इसकी खेती देश के उष्ण कटिबंधीय तथा उपोष्ण क्षेत्रों में समुद्र की सतह से लगभग 1000 मीटर की ऊंचाई तक सफलतापूर्वक की जा सकती है। इसकी खेती वैसे तो सभी प्रकार की जलवायु में कर सकते हैं, किन्तु अधिक उत्पादन तथा अच्छे आकार व गुणों वाले फल उत्पादन के लिए शुष्क एवं गर्म जलवायु उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त उन क्षेत्रों में जहां भूमिगत जल काफी निचली सतह पर हो, वहां भी बेर की खेती की जा सकती है।

मृदा

बेर की खेती विभिन्न प्रकार की मृदा जैसे उथली, गहरी, कंकरीली, रेतीली, चिकनी आदि में की जा सकती है। इसके अतिरिक्त यह लवणीय एवं क्षारीय दशा में भी उगने की क्षमता रखता है। व्यावसायिक

बढ़ती उपयोगिता बेर की

खेती के लिए जीवांशयुक्त बलुई दोमट मृदा सर्वोत्तम मानी गई है। किन्तु वे क्षेत्र जहां की जमीन निचली, रेतीली, ऊसर एवं बंजर है और अन्य फसलें व फल वृक्ष नहीं उगाये जा सकते, वहां भी सीमित साधनों के साथ बेर की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

प्रवर्धन

व्यावसायिक दृष्टि से खेती करने के लिए कायिक विधि से तैयार बेर के पौधे ही उपयोग में लाने चाहिए। बेर का प्रवर्धन चश्मा विधि द्वारा किया जाता है। चश्मा लगाने की कई विधियां जैसे-पैबंद चश्मा, ढाल चश्मा व छल्ला चश्मा प्रचलित हैं। व्यावसायिक तौर पर पौधे बनाने के लिए पैबंद चश्मा (पैच बडिंग) सबसे सफल व प्रचलित विधि है।

रोपण विधि

फलदार वृक्ष प्राय: वर्गाकार विधि द्वारा लगाये जाते हैं, जहां पंक्ति से पंक्ति तथा पौध से पौध की दूरी समान होती है। पौधों के आपस की दूरी भूमि की दशा पर भी निर्भर करती है। उपजाऊ मृदा में दूरी अधिक तथा अनुपजाऊ या ऊसर मृदा में दूरी कम रखी जाती है, क्योंकि पौधों का विकास कम होता है। बेर 8×8 मीटर की दूरी पर लगाया जाना चाहिए। बेर के साथ आंवला या अमरूद, पूरक फसल के रूप में लगाएं जा सकते हैं। विभिन्न प्रकार की बंजर भूमि में आंवले के साथ बेर को पूरक पौधे के रूप में रोपण करने की प्रथा प्रचलित हो रही है। बेर के पौधे से दूसरे अथवा तीसरे वर्ष फलत की शुरुआत हो जाने के कारण आय मिलनी शुरू हो जाती है।

पौध-रोपाई

बेर की खेती प्राय: शुष्क, अर्धशुष्क क्षेत्रों में की जाती है, जो पूरी तरह वर्षा पर आधारित हैं इसलिए पौध स्थानांतरण वर्षा ऋतु (जुलाई-सितंबर) में किया जाता है। नर्सरी से पौध निकालते समय ध्यान रखें कि जड़ों को कम से कम क्षति पहुंचे। यदि पौध पॉलीथीन की थैली में उगाये गए हैं तो थैली को फाड़कर निकाल दें। सिंचाई की सुविधा होने की दशा में बेर के पौधे जनवरी-फरवरी में भी लगाये जा सकते हैं। इस समय रोपाई के लिए पौधों के साथ एवं मृदा की पिंडी के साथ पौध निकालने की आवश्यकता नहीं होती। पौध सदैव शाम के समय लगानी चाहिए तथा रोपाई के पश्चात हल्की सिंचाई अवश्य करें।

सिंचाई

एक बार अच्छी तरह स्थापित हो जाने के बाद बेर में बहुत ही कम सिंचाई की

भरपूर ऊर्जा का स्रोत है बेर

रोगों से बचाव में सहायक है बेर

जरूरत पड़ती है। गर्मी की सुषुप्तावस्था के बाद 15 जून तक अगर वर्षा नहीं हो तो सिंचाई आरंभ करें ताकि नई बढ़वार समय पर शुरू हो सके। इसके बाद अगर मानसून की वर्षा का वितरण ठीक हो तो सितंबर तक सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। सितंबर में फूल आने शुरू होते हैं और 15 अक्टूबर तक फल लग जाते हैं। इस दौरान हल्की सिंचाई करें। इसके बाद अगर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो तो 15 दिनों के अंतर पर सिंचाई कर सकते हैं। विशेष किस्म के संभावित पकने के समय से 15 दिनों पहले सिंचाई बंद कर देनी चाहिए ताकि फलों में मिठास व अन्य गुणों का विकास अच्छा हो सके।

फलों की तुड़ाई

बेर, नियमित फल देने वाला वृक्ष है। कलिकायन द्वारा तैयार पौधे से चौथे वर्ष फल मिलना प्रारंभ हो जाता है। पौधे पर सभी फल एक समय पककर नहीं तैयार होते, अत: तुड़ाई 4-5 बार में की जाती है। तुड़ाई परिपक्वता अवस्था पर ही करनी चाहिए। इसकी पहचान के लिए फल जब अपनी किस्म के अनुरूप रंग के हो जाएं तब तोड़े जाने चाहिए। अधपके फलों का बाजार भाव ठीक नहीं मिलता। इस अवस्था में फलों की भंडारण क्षमता भी कम होती है। अत: फलों की तुड़ाई सही समय पर की जानी आवश्यक है। तुड़ाई हाथ द्वारा की जाती है, डंडे आदि का उपयोग करने पर फलों को चोट पहुंचती है। फल को अच्छी दशा में लंबे समय तक बनाये रखने के लिए फलों की तुड़ाई सुबह या शाम के समय करनी चाहिए। तुड़ाई उपरांत अच्छे बाजार भाव व लंबे समय तक भंडारण के लिए फलों का वर्गीकरण आवश्यक है। तुड़ाई के समय किस्म के अनुसार अलग-अलग रखा जाता है। इसके बाद फलों की उनके रंग व आकार के अनुसार छंटाई की जाती है। छंटाई उपरांत फलों को बांस की टोकरियों, लकड़ी या गत्ते के डिब्बों में बाजार भेजा जाता है।

बेर उत्पादन के आर्थिक फायदे

शुष्क क्षेत्रों में बार-बार पड़ने वाले सूखे से मुकाबला करने के लिए बेर की खेती एक बहुआयामी सुरक्षा कवच साबित हुई है। इसी वजह से बेर की खेती अकाल के विरुद्ध एक बीमा की तरह है। कम व अनियमित वर्षा में यहां खरीफ फसलें अक्सर असफल हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में भी बेर से कुछ न कुछ आमदनी जरूर मिलती है। बेर की खेती न केवल सिंचित अवस्था में फायदे का सौदा है, बल्कि बारानी अवस्था में भी बहुत अच्छी आय देती है। स्वादिष्ट फलों के अलावा सूखी जलावन लकड़ी, पत्तियों का चारा तथा कांटेदार शाखाएं भी अतिरिक्त आमदनी का जरिया हैं। लागत व्यय में एक बड़ा हिस्सा श्रम के रूप में है, जो कि लगभग 60 प्रतिशत तक होता है। इसमें वर्ष के अधिकांश समय में कुछ न कुछ कृषि क्रियाएं चलती रहने के कारण रोजगार के ज्यादा अवसर उपलब्ध होते हैं।

पुराने बागों का जीर्णोद्धार

मनु त्यागी[1], **नवप्रेम सिंह**[2] और **बिक्रमजीत सिंह**[3]

वर्तमान समय में देश की कृषि स्थिति भावी स्थायित्व के लिए विविधता की मांग करती है। इसके लिए बहुत से विकल्पों का क्रियान्वयन किया जा सकता है, जिनमें बागवानी प्रमुख है। बागवानी, कृषि में विविधता लाने के साथ-साथ किसान की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार भी लाती है। यह सौर पारिस्थितिकीय सुरक्षा मुहैया कराने में भी सक्षम है। केला, आम, अमरूद, नीबू, अंगूर और लीची आदि देश की प्रमुख फल फसलों में गिनी जाती हैं। गत वर्षों में बागवानी फसलों के अंतर्गत क्षेत्रफल बढ़ गया है, परंतु उत्पादन में कुल 35-40 प्रतिशत वृद्धि ही हुई है। पुराने बागों की उत्पादन क्षमता पुनः स्थापित करने के लिए कटाई-छंटाई की विभिन्न तकनीकें विकसित की गयी हैं। आम, लीची, बेर, नाशपाती, अंगूर व नीबू प्रजाति के फलों के लिए विकसित जीर्णोद्धार तकनीक संक्षिप्त रूप से इस आलेख में प्रस्तुत की गई है।

देश में लगभग 30-40 प्रतिशत बाग पुराने व अनुत्पादक हैं, जो कम उत्पादन और निम्न गुणवत्ता के फल का उत्पादन करते हैं। पुराने व उपेक्षित बगीचों में अनियमित फलन, विकार, कीट तथा रोगों की समस्या भी अधिक होती है, जिनके कारण बागवानी लाभकर नहीं रहती है।

पुराने बागों में कम उत्पादन के निम्न कारण हैं:

- वृक्षों का फैलाव बढ़ने के कारण एक वृक्ष की शाखाएं बढ़कर दूसरे वृक्षों की शाखाओं को छूने लगती हैं।
- घने छत्रक के कारण सूर्य का प्रकाश अंदर नहीं पहुंच पाता है, परिणामस्वरूप प्रकाश संश्लेषण क्रिया कम हो जाती है।

पुराना बाग

- उत्पादक शाखाएं कम हो जाती हैं।
- आंतरिक छत्रक में पुष्पन व फलन कम हो जाता है। यही नहीं ऐसे वृक्षों की अधिकतम शाखाओं में फलन बाहरी फैलाव पर ही सीमित हो जाता है।
- कीट व रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है।

आमतौर पर किसान ऐसे अनुत्पादक तथा कम उपज वाले वृक्षों के स्थान पर नए वृक्षारोपण कर अन्य अधिक लाभकारी वार्षिक फसलों की खेती करते हैं। बागवानी फसलें 5-10 वर्ष की आयु के उपरान्त व्यावसायिक उपज देती हैं। पुराने बागों के स्थान पर नए बागों का रोपण किसान को नियमित आय से वंचित कर देता है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण

[1,3]कृषि विज्ञान केंद्र, पठानकोट; [2]पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना (पंजाब)

कीट व रोग नियंत्रण

कटे-छंटे वृक्षों का विभिन्न कीट, रोगों व अन्य व्याधियों से बचाव अनिवार्य है। इसके लिए जीर्णोद्धार उपरान्त निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान देना चाहिए:

- कटाई के तुरन्त बाद कटे हुए भाग पर बोर्डो पेस्ट अथवा बोर्डो पेंट या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड लगाएं, ताकि कटे हुए भाग पर कवक इत्यादि न पनपने पाएं। यह उपचार जून-जुलाई में पुन: दोहराएं, जिससे कि वर्षा ऋतु में शाखाएं फफूंदी अथवा अन्य किसी रोग से प्रभावित न होने पायें।
- प्राय: गर्मियों में तेज धूप व अधिक तापमान के कारण छाल विभाजित होने लगती है। इसकी रोकथाम के लिए मुख्य तने पर चूने का लेप लगा सकते हैं।
- छंटाई वाले वृक्षों में छाल खाने वाली गिडार की समस्या भी होती है। इसकी रोकथाम के लिए छिद्र को ठीक से साफ करें। सितंबर-अक्टूबर व दिसंबर-जनवरी में मिट्टी के तेल में भीगी रूई इसमें भर दें। ऐसा करने से सूंडी अंदर ही मर जाती है।

पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पुराने बागों को अतिरिक्त देखभाल की आवश्यकता होती है। जीर्णोद्धार तकनीक द्वारा ऐसे बागों को पुनर्जीवित किया जा सकता है, जिससे लंबे समय तक नियमित आय की प्राप्ति सम्भव है।

इस तकनीक द्वारा अनुत्पादक व रोगग्रस्त शाखाओं को अलग करके स्वस्थ छत्रक का विकास सम्भव है। जीर्णोद्धार से वायु संचरण व प्रकाश संश्लेषण क्रिया को बढ़ावा मिलता है। इससे नवीन कल्लों का विकास होता है, जो फलन के लिए उपयोगी होते हैं।

नए कल्लों को कम से कम तीन माह तक निर्बाध रूप से बढ़ावा देना चाहिए। इसके बाद पेड़ की संरचना के आधार पर 4-6 स्वस्थ व बाहर की ओर बढ़ती शाखाओं का चुनाव करना चाहिए। इन शाखाओं के अतिरिक्त अन्य नई शाखाओं को पूरी तरह से काटकर हटा देना चाहिए।

अंगूर

गुणवत्तायुक्त उत्पादन के लिए अंगूर में कटाई-छंटाई अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा देखा गया है कि अनुचित विधि द्वारा कटाई-छंटाई करने से लताएं अनुपजाऊ हो जाती हैं। ऐसी लताओं का दिसंबर में जीर्णोद्धार कर सकते हैं। इसके लिए प्राथमिक शाखाओं को 30 सें.मी. छोड़ते हुए, शेष ऊपरी भाग छांट देना चाहिए। इसके पश्चात टॉप वर्किंग द्वारा कम पैदावार वाली किस्मों को नई व उत्पादक किस्मों में परिवर्तित किया जा सकता है। इसके लिए फरवरी के अंत में छंटी शाखाओं से निकले एक वर्षीय प्ररोह पर सांकुर शाख को कलम बंधन द्वारा आरोपित करते हैं।

आम

देश में आम की बागवानी बड़े पैमाने पर की जाती है, परंतु बहुत से राज्यों में बाग पुराने हैं व कई तरह की समस्याओं से ग्रस्त हैं जैसे कि अनियमित फलन, दैहिक विकार, कीट, रोग आदि। ऐसे बागों को पुन: नया जीवन देना सम्भव है।

विभिन्न शोध केन्द्रों में किए गए अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि आम के स्वस्थ व खुले छत्रक के विकास के लिए दिसंबर में कटाई-छंटाई करनी चाहिए। इसके लिए चुनी हुई शाखाओं को भूमि की सतह से लगभग 3 मीटर की ऊंचाई से काट देना चाहिए। अन्य सूखी, रोगग्रस्त व अवांछित शाखाओं को पूरी तरह से काट देना चाहिए। मार्च-अप्रैल में इन कटी शाखाओं पर नए कल्लों का फुटाव होता है। प्रत्येक शाखा पर 4-6 स्वस्थ प्ररोह को बढ़ावा दें व शेष प्ररोहों को जून-जुलाई तक हटा देना चाहिए। इस प्रकार नव सृजित प्ररोह लगभग 2-3 वर्षों के उपरान्त फलने-फूलने लगते हैं। यह कार्य फलत वर्ष के उपरान्त करना चाहिए।

आम के अनुत्पादक बाग

लीची

लीची की बागवानी बिहार, पश्चिम बंगाल, उत्तराखंड, पंजाब आदि राज्यों में लोकप्रिय है। कुछ प्रदेशों में अधिकतम बाग पुराने हैं, जो आने वाले समय में व्यावसायिक रूप से अनुत्पादक हो जाएंगे। ऐसे बागों को जीर्णोद्धार द्वारा सुधारा जा सकता है। इसके लिए वृक्षों को फल तुड़ाई के पश्चात अगस्त-सितंबर में काटते हैं। चयनित शाखाओं को जमीन की सतह से 1.5-2 मीटर की ऊंचाई पर काटें। बाद में दिसंबर में प्रत्येक वृक्ष को 60 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 2.25 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट व 0.60 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश देना चाहिए। इसके पश्चात 1.60 कि.ग्रा. यूरिया (दो भागों में) फरवरी व अप्रैल में देना चाहिए।

वृक्ष की कटाई-छंटाई

नये कल्लों का विकास करने के लिए 100 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, एक कि.ग्रा. यूरिया, एक कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट तथा एक कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति वृक्ष की दर से देना चाहिए। गोबर की सड़ी खाद व सिंगल सुपर फॉस्फेट की पूर्ण मात्रा दिसंबर में देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त यूरिया की आधी मात्रा व म्यूरेट ऑफ पोटाश की पूरी मात्रा फरवरी में दें। शेष यूरिया की मात्रा जून के अंत में देना लाभकारी है।

जीर्णोद्धार के उपरान्त टॉप वर्किंग विधि द्वारा आम की बीजू व कम पैदावार वाली किस्मों को उन्नत किस्मों में परिवर्तित कर सकते हैं। इसके लिए जुलाई-अगस्त में 4-5 नव सृजित प्ररोहों पर चयनित सांकुर शाखा को साइड ग्राफ्ट करें।

बेर

अगर बेर के पेड़ों की नियमित रूप से काट-छांट न हो, तो उत्पादकता व गुणवत्ता दोनों ही कम हो जाती है। इस तरह के वृक्षों में कीट व फफूंदी का संक्रमण भी हो सकता है। ऐसे पुराने पेड़ों को निम्नलिखित विधि द्वारा पुन: जीवन दे सकते हैं:

- मुख्य शाखाओं को तेज धार वाली आरी के द्वारा काट देना चाहिए। यह क्रिया मई के दूसरे पखवाड़े में पूर्ण करनी चाहिए।
- जुलाई-अगस्त में इन शाखाओं पर नये कल्लों का सृजन होता है। इनमें से 2-3 स्वस्थ प्ररोह (जो समान दूरी पर हों) प्रति शाखा का चुनाव करें। चयनित प्ररोहों की अगस्त-सितंबर में पिंचिग करें। ऐसा करने से पार्श्व शाखाओं की बढ़ोतरी होती है व दिसंबर के अंत तक स्वस्थ छत्रक विकसित हो जाता है। इसके अतिरिक्त मई में इन पेड़ों की हल्की काट-छांट करें।

जीर्णोद्धार के पश्चात प्रत्येक पेड़ को 100 कि.ग्रा. सड़ी गोबर की खाद देनी चाहिए। इसके अलावा एक कि.ग्रा. यूरिया भी डालें। यूरिया की आधी मात्रा जुलाई व शेष मात्रा अक्टूबर में देनी चाहिए। कटाई के उपरान्त कीट व रोगों से बचाव के लिए सामयिक देखरेख आवश्यक है।

नीबू प्रजाति

नीबू प्रजाति में अनुचित मूलवृंत, पौध प्रवर्धन के लिए स्वस्थ सामग्री की अनुपलब्धता, क्षारीय तथा जलभराव वाली भूमि, कीट एवं रोग आदि समस्याओं से उत्पादन में कमी आ जाती है। अनुत्पादक अथवा पुराने वृक्षों को जीर्णोद्धार द्वारा पुन: जीवंत किया जा सकता है।

इसके लिए पतले, अस्वस्थ व पुष्पन एवं फलत के लिए अनुपयोगी प्ररोहों को जनवरी-फरवरी में निकाल दें। वृक्षों को दिसंबर में 100 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष की दर से सड़ी गोबर की खाद प्रदान करें। इसके अतिरिक्त 2 कि.ग्रा. यूरिया व 2.75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट प्रति वृक्ष देना चाहिए। फॉस्फोरस की सम्पूर्ण मात्रा फरवरी में दें। यूरिया को दो भाग में प्रयोग करें। पहला भाग फरवरी व दूसरा भाग अप्रैल-मई

पुराने बागों के लिए जीर्णोद्धार तकनीक

- दिसंबर में उन पुराने व अनुत्पादक बागों की पहचान करें, जिन्हें जीर्णोद्धार की आवश्यकता है।
- वृक्षों की अनुत्पादक, रोगग्रस्त व आड़ी-तिरछी शाखाओं को सफेद चाक द्वारा भूमि सतह से 3 मीटर की ऊंचाई पर चिन्हित कर लें।
- शाखाओं को चिन्हित स्थान पर गोलाई में हल्की कटाई करते हुए चीरा लगाएं। इसके पश्चात ऊपर से पूरी शाखा काट दें। ऐसा करने से शाखाओं के फटने की आशंका नहीं रहती है।
- छंटाई के लिए तेज धार वाली आरी अथवा पावर-प्रूनर का इस्तेमाल करें।
- छंटाई के पश्चात शाखाओं के कटे हुए भाग पर बॉडी पेस्ट का लेप लगाएं। इससे रोग व अन्य व्याधियों से बचाव होता है।

स्वस्थ वृक्ष

में प्रदान करने से वानस्पतिक विकास को बढ़ावा मिलता है।

इसके अतिरिक्त साइला व नीबू प्रजाति के अन्य कीट तथा व्याधियों के नियंत्रण के लिए संस्तुत मात्रा में कीटनाशक व कवकनाशक का छिड़काव करना चाहिए।

अंत:सस्यन

जीर्णोद्धार के पश्चात शुरू के 2-3 वर्षों में मौसमानुसार तरह-तरह की अंतर्वर्ती फसलों लेकर खाली भूमि के सदुपयोग के साथ-साथ अतिरिक्त लाभ भी कमाया जा सकता है। अंतर्वर्ती फसलों में सब्जी (जैसे-मटर, गोभी, टमाटर, प्याज, मूली, सेम व पत्तेदार सब्जियां) व दलहनी फसलों (जैसे-मूंग, उड़द, चना आदि) को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। अंत:फसलों के रूप में दलहनी फसलों का समावेश सर्वोत्तम है। ये मृदा को उपजाऊ बनाती हैं, जो पौधों के लिए लाभदायक है। फलों में आड़ू, आलूबुखारा, फालसा आदि को पूरक के रूप में लगाया जा सकता है। इन सभी फसलों के अतिरिक्त बरसीम, ढैंचा आदि अंतर्वर्ती फसल लगाने से भी मृदा की गुणवत्ता बढ़ती है, जिसके फलस्वरूप इन वृक्षों की बढ़वार होती है। अंतर्वर्ती फसलों में सिंचाई, खाद प्रबंधन व अन्य सस्य क्रियाएं पीएयू द्वारा दी गई संस्तुति के अनुसार करें।

जीर्णोद्धार एक ऐसी तकनीक है, जिसके द्वारा पुराने, आच्छादित वृक्षों को पुन: जीवंत करते हुए व्यावसायिक रूप से उत्पादक बनाया जा सकता है। जहां नए बागों में फलत देर से होती है, वहीं ये बाग शीघ्र फलन की अवस्था में आ जाते हैं। इससे संसाधनों की बचत होने के साथ-साथ आय में वृद्धि भी होती है। ■

आलू के लिए उपयोगी कृषि उपकरण

देवेश कुमार[1], **एच.एल. कुशवाहा**[2] और **आदर्श कुमार**[3]
कृषि अभियांत्रिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

आलू की खेती के लिए कृषि उपकरणों की खरीद प्रमुख पूंजीगत निवेश है, जो फसल उत्पादन की कुल लागत का लगभग 25 प्रतिशत से अधिक हो सकता है। पैदावार की लागत को कम करने के लिए मशीनों का कुशल उपयोग बहुत महत्वपूर्ण होता है। आलू की फसल को अक्टूबर से नवंबर में बोया जाता है। इसकी बुआई करने में काफी हद तक उपकरणों का उपयोग किया जाता है। आलू की बुआई, खेत की तैयारी और खुदाई में भी अधिकतर मशीनों का उपयोग होता है जैसे कल्टीवेटर, डिस्क हैरो, रोटावेटर, पटेला, आलू बुआई उपकरण, खुदाई यंत्र आदि। इनका उपयोग खेत की तैयारी के लिए भी किया जाता है। कुछ क्षेत्रों में मशीनों से कृषि कार्य नहीं किया जाता, यदि इन क्षेत्रों में किसानों को नये एवं उपयोगी यंत्रों की जानकारी हो तो इससे उत्पादकता में वृद्धि एवं लागत में कमी लाई जा सकती है।

आलू, रबी मौसम में उगाई जाने वाली नगदी फसल है, जिसे सब्जियों का राजा भी कहा जाता है। दुनिया में 100 से अधिक देशों में आलू की फसल को उगाया जाता है। इसकी फसल को मूलरूप से दक्षिण अमेरिका का माना जाता है। आलू का प्रचार-प्रसार और खेती ब्रिटिश शासन के दौरान उत्तर भारत में की गई थी यह अब देश भर में उगाया जाता है। भारत में आलू की औसत उपज 152 क्विंटल प्रति हैक्टर है, जो और देशों की औसत से काफी कम है। आलू की फसल को उगाने के लिए उन्नत किस्मों के रोगरहित बीजों की उपलब्धता अति आवश्यक है।

[1]वरिष्ठ रिसर्च फैलो, [2]वरिष्ठ वैज्ञानिक, [3]प्रधान वैज्ञानिक

खेत की तैयारी

खेत की तैयारी तथा मृदाजनित रोगों व खरपतवार के प्रकोप को कम करने के लिए मई-जून में 2-3 बार खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए। आलू की बुआई से 5 से 7 दिनों पहले खेत में पटेला करना आवश्यक है। इससे पहले समतल खेत की एक बार गहरी जुताई करनी चाहिए। इसके बाद 15 से 20 सें.मी. की गहराई तक 2 से 3 बार हैरो या कल्टीवेटर से 3-4 बार जुताई करके खेत अच्छी तरह तैयार करते हैं। ऐसा करने से अंकुर जल्दी व एक समान निकलते हैं।

रोटावेटर

आलू की किस्में

- **कुफरी चन्द्रमुखी:** यह 150-200 क्विंटल प्रति हैक्टर उपज देती है। यह अगेती किस्म है, जो 80-90 दिनों में तैयार हो जाती है। यह उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल आदि क्षेत्रों में बोई जाती है।
- **कुफरी बहार:** यह 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टर उपज देती है। यह मध्यम पकने वाली किस्म है। यह 100-110 दिनों में तैयार हो जाती है। यह पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, दिल्ली तथा राजस्थान के लिए उपयुक्त है।
- **कुफरी देवा:** यह 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टर उपज देती है। यह पश्चिमी उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र व मध्यवर्ती मैदानों के लिए उपयुक्त है। यह मैदानी इलाकों में 130-135 दिनों में तथा पहाड़ी क्षेत्रों में 160 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।

बीज की तैयारी

आलू का बीज हमेशा विश्वसनीय संस्था या सरकारी बीज उत्पादन संस्था से ही खरीदकर बोएं तथा हर 3-4 वर्षों के बाद आलू का बीज बदलना लाभकारी होता है। बीजों को अच्छी तरह से अंकुरित करें। 30-50 ग्राम भार (3.5 सें.मी.) वाले बीज अच्छे रहते हैं। बुआई से कम से कम 10 दिनों पहले आलू के बीज को शीत भंडारगृह से निकाल लें। इस बात का विशेष ध्यान रखें कि तापमान की अधिकता के कारण आलू सड़ने का डर रहता है। अंकुरण के लिए बीज को किसी छायादार या ठंडे स्थान पर एक तह में फैला देना चाहिए तथा बिना अंकुरण वाले कंदों (आलू) को अलग छांटकर रखें। बीज को खेत तक ले जाने के लिए प्लास्टिक की टोकरी या ट्रे का प्रयोग करें, जिससे आलू बीज के अंकुरण न टूटें।

भूमि एवं जलवायु

आलू की खेती के लिए जीवांशयुक्त बलुई-दोमट मृदा ही अच्छी होती है। भूमि में जल निकासी की भी अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए। आलू की फसल के लिए क्षारीय तथा जलभराव

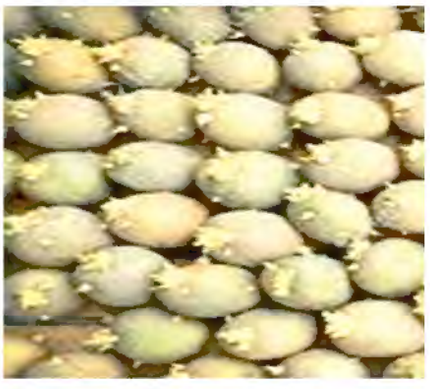

आलू के अंकुरित बीज

डिस्क हैरो

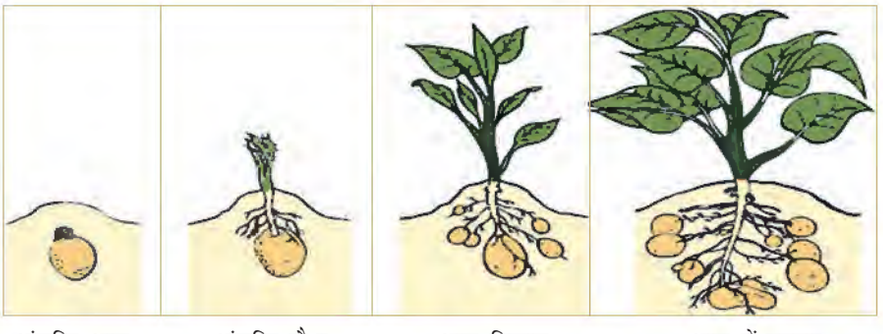

अंकुरित आलू | अंकुरित पौधा | आलू विकास | आलू में बढ़वार

कल्टीवेटर 9

अथवा पानी वाली भूमि कभी न चुनें।

बुआई का समय एवं बीज की मात्रा

उत्तर भारत में आलू की बुआई का उपयुक्त समय अक्टूबर का पहला पखवाड़ा है तथा पूर्वी भारत में अक्टूबर के मध्य से जनवरी तक होता है। इसकी बुआई, तापमान को ध्यान में रखकर करनी चाहिए। औसत 25 से 26^0 सेल्सियस तापमान आलू की बुआई के लिए उपयुक्त होता है। अधिकतम तापमान 30^0 से 32^0 सेल्सियस व न्यूनतम तापमान 18 से 20^0 सेल्सियस हो तो यह बुआई का सही समय होता है। पंक्ति से पंक्ति की दूरी 50 सें.मी. व पौधे से पौधे की दूरी 20-25 सें.मी. रखें। इसके लिए 25 से 30 क्विंटल प्रति एकड़ बीज पर्याप्त है। यह कोशिश करें कि बुआई का कार्य बुआई उपकरण से किया जाए। बुआई का कार्य सुबह ही कर लेना चाहिए ताकि आलू का बीज गर्म मृदा के सम्पर्क में न आये तथा बीज सड़े नहीं। बीज पर 5-7 सें.मी. मृदा चढ़ाना पर्याप्त है।

प्रमाणित बीज का आकार व भार

आलू के प्रमाणित बीज का आकार एवं भार निम्नलिखित है:

पहाड़ी क्षेत्र के लिए

श्रेणी	आकार (मि.मी.)	भार (ग्राम)
छोटा आकार	30 से 60	25 से 150
बड़ा आकार	60 से अधिक	150 से अधिक

मैदानी क्षेत्र के लिए

श्रेणी	आकार (मि.मी.)	भार (ग्राम)
छोटा आकार	30 से 55	25 से 125
बड़ा आकार	55 से अधिक	125 से अधिक

चार पंक्ति आलू बुआई उपकरण

सारणी 1. आलू की फसल के लिए उपयोगी उपकरण

क्र.सं.	खेती का कार्य	उपकरण के प्रकार	शक्ति स्रोत	कार्य क्षमता हैक्टर/घंटा
1.	खेत की जुताई	1-मोल्ड बोर्ड पलोह, 2-कल्टीवेटर-रिजिड टाइप, स्प्रिंग टाइप (7 फाले, 9 फाले, 11 फाले)	ट्रैक्टरचालित 30-35 हॉर्स पॉवर	0.40-0.66 0.35-0.66
2.	भूमि की तैयारी	कल्टीवेटर/रोटावेटर	ट्रैक्टरचालित 30-35 हॉर्स पॉवर अथवा मानवचालित उपकरण	0.35-0.66 ट्रैक्टरचालित, 0.12 मानवचालित
2.	बुआई यंत्र	पोटैटो प्लांटर-ऑटोमेटिक/सेमीऑटोमेटिक, 2, 3, 4 पंक्ति/फावड़ा इत्यादि	ट्रैक्टरचालित 30-35 हॉर्स पॉवर मानवचालित उपकरण	0.30-0.50 ट्रैक्टरचालित, 0.12 मानवचालित
3.	दवाई छिड़काव यंत्र	स्प्रेयर-मानवचालित: हैंड स्प्रेयर, कनापसक स्प्रेयर, बकेट स्प्रेयर, रॉकर, स्प्रेयर हैंड सीरिंज शक्तिचालित: स्ट्रैचर स्प्रेयर, पावर टेक ऑफ स्प्रेयर, ट्रैक्शन स्प्रेयर, फुट स्प्रेयर और पैडल, अल्ट्रा वॉल्यूम, मिस्ट	ट्रैक्टरचालित, मानवचालित एवं 30-35 हॉर्स पॉवर	0.45 5 मानव-घंटा/ हैक्टर 2.05 शक्तिचालित-
4.	सिंचाई	नहर, नलकूप, कुंआ, ट्यूबवेल, स्प्रिंक्लर एवं इंजनचालित पंखा	5 हॉर्स पॉवर इंजन	1.5 शक्तिचालित
5.	खुदाई	पोटैटो डिगर, पोटैटो हार्वेस्टिंग, बिनाई, फावड़ा, खुरपी इत्यादि	ट्रैक्टरचालित, मानवचालित एवं 30-45 हॉर्स पॉवर	0.40 ट्रैक्टरचालित 0.25 मानवचालित 14-17 मानव-घंटा/हैक्टर
6.	भंडारण	शीतगृह, पॉलीहाउस, ऊर्जा चैम्बर, बेसमेंट और तहखाने में भंडारण	बिजली द्वारा	12552 KJ/घंटा 50 किलोवाट दर मी^{3}/वर्ष

ऑटोमैटिक आलू बुआई यंत्र

बीज के आकार का निर्धारण आलू में मध्य से दोनों तरफ की चौड़ाइयों के मध्यमान या बीज की लंबाई या बीज के भार के अनुसार किया जाता है तथा बीज में 3 से 4 आंखें होनी आवश्यक हैं।

खाद व उर्वरक

आलू की खेती में उर्वरक की आवश्यकता पड़ती है तथा खाने वाले आलू में 120 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस और 100 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। अगर सूक्ष्म तत्वों की कमी हो, तो जांच के बाद पूरी की जाती है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा एवं फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय देनी चाहिए। यदि खेत में हरी खाद डाली जाती है तो 20-30 प्रतिशत नाइट्रोजन की बचत होती है। इसी प्रकार गोबर की 20-30 टन प्रति हैक्टर खाद डालने से नाइट्रोजन की आधी व फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी बचत की जा सकती है। इसके साथ में सूक्ष्म तत्वों की आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है।

मैगजीन टाइप प्लांटर

किसानों का स्वास्थ्य, कल्याण एवं सुरक्षा

किसान को स्वास्थ्य, कल्याण एवं सुरक्षा का ध्यान रखना चाहिए। किसान सबका जीवन आधार हैं। इनके जोखिम कम करने के लिए ध्यान देना चाहिए। कीटनाशक से जुड़े उपकरणों तथा मशीनरी को सुनिश्चित करने से नुकसान नहीं पहुंचता है। इससे किसानों की सुरक्षा, पर्यावरण और स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है

- कुशल और सुरक्षित उपयोग में किसानों को प्रशिक्षित करना जरूरी
- मशीनरी तथा कीटनाशक/उर्वरकों के प्रयोग की जानकारी
- खेत और जीवन में सुधार करने के मानकों को समझना
- सुनिश्चित करें कि उपकरण ऑपरेटर के पास प्रशिक्षण है या नहीं ताकि दुर्घटना की आशंका न हो तथा कार्य करते समय ढीले कपड़े न पहनें। आंखों के खतरों को कम करने के लिए सुरक्षा कवच या चश्मे का उपयोग
- आलू के कट्टे उठाते समय यांत्रिक उपकरणों का उपयोग
- कृषि मशीनरी जैसे हार्वेस्टर को चलाने से पहले उसके कलपुर्जों की जांच पड़ताल कर लें। इससे जोखिम, चोट, क्षति या हानि की कम आशंका
- आलू का हार्वेस्टर एक शक्तिशाली और क्षमताशील उपकरण है तथा सुरक्षा एक आदत होनी जरूरी
- सुनिश्चित करें कि यदि मशीन चल रही हो तो कभी भी ट्रैक्टर और हार्वेस्टर के बीच किसी को आने की अनुमति न हो
- लापरवाही के परिणामस्वरूप ज्यादातर दुर्घटनाएं होती हैं। आमतौर पर आलू की फसल के दौरान दुर्घटनाओं में से एक तिहाई चोटें हाथ की उंगलियों, कलाई और बांहों में लगती हैं। इस बारे में ध्यान रखना आवश्यक

उच्च क्षमता वाला ट्रैक्टरचालित स्प्रेयर

हस्तचालित औजार द्वारा आलू खुदाई

बहुउद्देश्यीय ट्रैक्टरचालित यंत्र

खरपतवारों की रोकथाम

आलू की फसल में कभी भी खरपतवार न उगने दें। खरपतवार की प्रभावी रोकथाम के लिए बुआई के 7 दिनों के अंदर 0.5 कि.ग्रा. जिप्सम या लिन्यूरोन का 700 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

निराई व गुड़ाई

आलू के पौधे 10-15 सें.मी. बड़े हो जाएं तो शीघ्र ही निराई-गुड़ाई कर खरपतवार निकाल दें। मृदा चढ़ाने का कार्य 20-25 दिनों के अंदर ही किया जाना चाहिए तथा निराई-गुड़ाई का कार्य फावड़ा (कस्सी) या खुरपी से भी कर सकते हैं। छोटे किसानों के स्तर पर देखा जाए तो लोग फावड़ा व खुरपी का इस्तेमाल काफी करते हैं।

सिंचाई

आलू की फसल में पहली सिंचाई बुआई के 10-12 दिनों के बाद कर देनी चाहिए। यदि खेत को पलेवा नहीं किया है तो बुआई के तुरन्त बाद अथवा अगले दिन सिंचाई कर दें।

खुदाई एवं भंडारण

आलू की फसल जैसे ही तैयार हो जाए तो खुदाई सावधानीपूर्वक कर लें। फसल की खुदाई पोटैटो डिगर से करने के बाद आलुओं को किसी छायादार स्थान पर 10-15 दिनों तक ढेर में रख सकते हैं। ध्यान रखें कि ढेर की ऊंचाई 1-5 मीटर तथा चौड़ाई 4 से 5 मीटर से अधिक न हो। आलू पर सूर्य की रोशनी न पड़े, नहीं तो हरे होने की आशंका बढ़ जाती है। इसको चटाई या पुआल से ढकना चाहिए। आलू की खुदाई अधिक तापमान में नहीं करें। 30^0 सेल्सियस से कम तापमान पर खुदाई करें तथा आलू को बोरों में भरकर शीघ्र किसी नजदीकी शीतगृह में भंडारित करें।

विभिन्न प्रकार की आलू खुदाई मशीन

पावर (शक्ति स्रोत): किसान अपनी जमीन या खेत के अनुसार मशीन का चयन कर सकते हैं। जैसे-

मानवचालित यंत्र: फावड़ा, खुरपी, कुदाल इत्यादि।

पशुचालित यंत्र: देसी हल, लोहे का हल, कल्टीवेटर एवं पटेला इत्यादि।

शक्तिचालित यंत्र: कल्टीवेटर, डिस्क हैरो, रोटावेटर, मोल्ड बोल्ड प्लाऊ, चिंजिल प्लाऊ, सब सॉयलर इत्यादि।

लौकी की नई किस्म "बीआरबीजी-65"

बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर के वैज्ञानिकों ने छोटे परिवारों को ध्यान में रखते हुए लौकी की नई किस्म **बीआरबीजी-65** विकसित की है। यह किस्म बिहार के लिए उपयुक्त पाई गई है। साथ ही इसकी खेती वर्षभर की जा सकेगी। इसके फलों की लंबाई 32 से 35 सें.मी. और वजन 800 ग्राम से एक कि.ग्रा. तक होगा।

बीआरबीजी-65 लौकी गर्मी, वर्षात और अगेती शरद तीनों मौसम के लिए उपयुक्त है। बीएयू के वैज्ञानिकों ने इसके फल उच्च गुणवत्तायुक्त होने का दावा किया है। वैज्ञानिकों के अनुसार किसान वर्षभर इसकी खेती कर अपनी आय दोगुनी कर सकते हैं।

यहां के वैज्ञानिकों के अनुसार *बीआरबीजी-65* का फल देखने में बहुत खूबसूरत, छोटा और एक समान रूप से बेलनाकार होता है। लंबाई 32 से 35 सें.मी. और फलों का औसत वजन 800 ग्राम से एक कि.ग्रा. तक होता है। इसका बीज देर से बनने के कारण इनके फलों की तुड़ाई तीन दिन अधिक खेतों में रखकर की जा सकती है ताकि किसानों को बाजार भाव का उतार-चढ़ाव भी न झेलना पड़े।

बीएयू के वैज्ञानिकों ने नई किस्म की लौकी की औसत उपज 540 क्विंटल प्रति हैक्टर होने का दावा किया है, जो अन्य किस्मों की अपेक्षा बहुत ज्यादा है। इसकी खेती बरसात के मौसम में भी झालरी व पंडाल पद्धति से की जा सकती है। आर्थिक विश्लेषण के आधार पर पाया गया है कि यदि कोई किसान इस किस्म की लौकी की खेती करता है तो एक रुपये औसत लागत पर चार माह में 2.25 रुपये शुद्ध आमदनी प्राप्त कर सकता है।

अर्धशुष्क क्षेत्रों में जामुन की वैज्ञानिक खेती

संजय सिंह, ए.के. सिंह, डी.एस. मिश्रा और **पी.एल. सरोज**
केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र (के.शु.बा.सं.), वेजलपुर, पंचमहल (गोधरा),गुजरात

जामुन में पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं, जिसका उपयोग विभिन्न प्रकार से किया जा सकता है। मुख्य रूप से इसका गूदा और बीज प्रयोग में लाये जाते हैं। यह खनिज, प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट से भरपूर होता है। इसके गूदे द्वारा जेली, जैम, स्क्वैश, चूर्ण और सिरका बनाया जाता है। इसके बीज के पाउडर का उपयोग मधुमेह संबंधित रोगों में लाभदायक है। जामुन की पत्ती में प्रोटीन, फाइबर, कैल्शियम, फॉस्फोरस इत्यादि पाये जाते हैं। इसके बीज में प्रोटीन 8.5 प्रतिशत, रेशा 16.9 प्रतिशत, कैल्शियम 0.41 प्रतिशत और फॉस्फोरस 0.17 प्रतिशत पाया जाता है। इसके अलावा बीज में जेम्बोलीन तत्व भी पाया जाता है, जो मधुमेह रोग से मुक्त करता है। जामुन के फल में एंटीऑक्सीडेंट गुण प्रचुर मात्रा में होता है। इसकी छाल को भी घरेलू उपयोग में लाया जाता है। जामुन कृषि वानिकी एवं सामाजिक वानिकी के लिए उपयुक्त वृक्ष है। इसे विपरीत परिस्थितियों में भी उगाया जा सकता है। यह अर्धशुष्क बागवानी के लिए उत्तम है। इसकी लकड़ी कृषि यंत्र तथा घरेलू कार्य में उपयोगी होती है।

जामुन मिस्रटेसी कुल का पौधा है। इसका वानस्पतिक नाम सीजाइजीयम क्यूमीनी है। इसके पेड़ काफी बड़े होते हैं। पौधों में फूल मार्च में आते हैं एवं जून में पककर तैयार हो जाते हैं। जामुन के जननद्रव्यों में विभिन्नता पायी जाती है।

मृदा तथा जलवायु

जामुन को किसी भी प्रकार की मृदा में उगाया जा सकता है। इसकी खेती कम उपजाऊ मृदा में भी की जा सकती है। इसके लिए गहरी दोमट मृदा एवं बलुई दोमट मृदा उपयुक्त होती है। इसके अलावा यह उष्ण तथा उपोष्ण जलवायु में लगाया जा सकता है। पाले से छोटे पौधों को हानि पहुंच सकती है। शुष्क एवं अर्धशुष्क जलवायु में इसको लगा सकते हैं। जामुन के लिए न्यूनतम व अधिकतम तापमान क्रमशः 10^0 से 40^0 सेल्सियस उचित पाया जाता है। यह पाला सहन नहीं कर सकता है।

वानस्पतिक प्रवर्धन

देसी पौधे तैयार करना

बीज को पॉलीथीन की थैली में जून और जुलाई में 3-4 सें.मी. की गहराई में बोते हैं। बीज का अंकुरण 15-25 दिनों बाद होता है। 6 से 12 महीने बाद देसी पौधे मूलवृंत के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं।

सॉफ्ट वुड कलम द्वारा प्रवर्धन

एक साल पुराने मूलवृंत पर जब नई

जामुन की सॉफ्ट वुड कलम

जामुन की प्रजातियां

केन्द्र द्वारा विकसित उच्च गुणवत्तायुक्त प्रजातियों का विवरण नीचे दिया जा रहा है। जामुन के विभिन्न जननद्रव्यों में जैव विविधता प्रचुर मात्रा में पायी जाती है।

गोमा प्रियंका

गोमा प्रियंका

यह बढ़वार में मध्यम आकार की होती है। यह प्रजाति चौथे वर्ष से उत्पादन देने लगती है एवं जून के प्रथम सप्ताह में पककर तैयार हो जाती है। इसके फल का वजन 20 ग्राम से अधिक होता है एवं गूदे (86 प्रतिशत) की मात्रा अधिक पायी जाती है। पूर्णरूप से विकसित (10×10 मीटर) वृक्षों से 50-75 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष उपज प्राप्त होती है। गूदे में टीएसएस की मात्रा 16.8 प्रतिशत पायी जाती है।

थार क्रांति

थार क्रान्ति

यह बढ़वार में अधिक फैलने वाली किस्म है। इसमें फल उत्पादन चौथे वर्ष से प्रारंभ हो जाता है। इसके फल का वजन 20 ग्राम से अधिक होता है एवं गूदे (85.6) की मात्रा अधिक पायी जाती है। गूदे में टीएसएस की मात्रा 17.10 प्रतिशत पायी जाती है। वयस्क वृक्षों (10×10 मीटर) से 60-65 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष उपज प्राप्त होती है। यह प्रजाति चौथे वर्ष से उत्पादन देने लगती है एवं मई के अंतिम सप्ताह में फल पककर तैयार हो जाते हैं।

पत्तियों आने लगें तब इस पर सॉफ्टवुड ग्राफ्टिंग करते हैं। 35 से 40 दिनों पुरानी शाखा, जिस पर कलियां अच्छी हों, उसका चुनाव करते हैं। इन शाखाओं की पत्तियों को पेटिओल को छोड़कर, कलम करने के 12-15 दिनों पहले काट देते हैं। ध्यान रहे कि शिखर कली को किसी प्रकार की क्षति न पहुंचे। मूलवृंत के बीचों-बीच एक चीरा लगाते हैं और सायन के निचले भाग पर वेज आकार बनाते हैं। इस प्रकार तैयार सायन को मूलवृंत में लगे चीरे में इस प्रकार फिट करते हैं कि दोनों आपस में जुड़ जाएं। पॉलीथीन की पट्टी से जोड़ को अच्छे से बांध देते हैं। मूलवृंत और सायन शाखा का चुनाव तथा कलम करने का तरीका सही हो तो 90 प्रतिशत सफलता अप्रैल-मई में प्राप्त की जा सकती है।

जामुन में पैच बडिंग

स्व-स्थाने सॉफ्ट वुड कलम विधि

इस प्रकार से कलम लगाने पर सफलता अच्छी मिलती है और आसानी से बगीचा तैयार हो जाता है। इस विधि में मूलवृंत को तैयार गड्ढे में पहले से ही लगाकर रखते हैं और खेत में ही कलम बंधन का कार्य सम्पन्न करते हैं। स्व-स्थाने (इन-सीटू) सॉफ्ट वुड विधि से 75-85 प्रतिशत ज्यादा सफलता

जामुन का पौधा

अप्रैल में वर्षा आधारित क्षेत्रों में प्राप्त की जा सकती है और सांकुर डाली की वृद्धि भी अच्छी होती है।

पैच बडिंग

इसके लिए पुराने देसी पौधे (मूलवृंत) को काम में लेते हैं। मार्च व अप्रैल पैच बडिंग के लिए सर्वोत्तम समय है, व्यावसायिक स्तर पर जामुन की खेती के लिए पौधों को चश्मा (पैच) विधि से तैयार करना चाहिए। इस विधि से अप्रैल में पैबंद चश्मा विधि द्वारा 75-80 प्रतिशत तक सफलता प्राप्त की जा सकती है। स्व-स्थाने (इन-सीटू) पैच चश्मा विधि से 80 प्रतिशत से ज्यादा सफलता वर्षा आधारित क्षेत्रों में प्राप्त की जा सकती है और सांकुर डाली की वृद्धि भी अच्छी होती है।

बाग लगाना

वैसे तो कलमी पौधों को 10×10 मीटर की दूरी पर लगाते हैं और 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे को मई-जून में खोदकर खुला छोड़ देते हैं। वर्षा होने से पहले ऊपरी हिस्से की मृदा में 25-40 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद को सतह से 30 सें.मी. ऊपर तक भर देते हैं। बरसात के बाद जब मृदा जम जाती है तो जुलाई-अगस्त में पौधे को लगा दिया जाता है। इसके बाद पौधे के चारों तरफ की मृदा को दबा देते हैं।

जामुन की कटाई-छंटाई

पौधे की कटाई-छंटाई

प्रारंभ में पौधे की काट-छांट उचित आकार देने के लिए की जाती है। मुख्य तने पर लगभग 90 सें.मी. तक शाखा को नहीं रखना चाहिए। इससे आगे चलकर पौधे की निराई-गुड़ाई तथा खाद एवं उर्वरक का उपयोग करने में सुविधा होती है। अच्छे आकार तथा वृद्धि के लिए 4-5 शाखाएं पौधे के चारों तरफ बढ़ने देते हैं। जामुन को ज्यादा काट-छांट की आवश्यकता नहीं होती। केवल रोगग्रसित, सूखी तथा अनावश्यक शाखाओं को काटते रहना चाहिए। सघन बागवानी में 5×5 मीटर की दूरी पर पौधों को लगाते हैं। प्रतिवर्ष अक्टूबर में छंटाई का कार्य किया जाता है। शाखाओं की वार्षिक वृद्धि का 25 प्रतिशत भाग काट देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक

आठ वर्ष पुराने पौधे को लगभग 25 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 500 ग्राम नाइट्रोजन, 500 ग्राम फॉस्फोरस तथा

तनाबेधक कीट का प्रकोप

जामुन की सघन बागवानी

परंपरागत बागवानी द्वारा प्रति इकाई क्षेत्र में उत्पादन कम होता है। इसके साथ में उनके प्रबंधन में श्रमशक्ति की भी अधिक आवश्यकता पड़ती है। जामुन का बाग लगाने के लिए भूमि को रेखांकित कर पौधे से पौधे की तथा कतार से कतार की दूरी 5-10 मीटर रखनी चाहिए। पौधरोपण के लिए वर्षा ऋतु से पूर्व 1 घन मीटर आकार के गड्ढे तैयार करके मिट्टी तथा सड़ी हुई खाद (1:1) और 5 प्रतिशत क्विनालफॉस (50-100 ग्राम) मिश्रण से भरना चाहिए। बारिश के समय (जुलाई-अगस्त) इन गड्ढों के बीच जामुन की पौध लगानी चाहिए। जामुन में अच्छे फलन के लिए 5-10 प्रतिशत अन्य किस्मों के पौधे लगाने चाहिए ताकि फलत अच्छी हो। जामुन की सघन बागवानी विधि में दो कतारों की दूरी 5 मीटर रखते हैं। उन कतारों में पौधे को पांच-पांच मीटर की दूरी पर लगाते हैं। इस पद्धति में वर्गाकार की अपेक्षा चार गुना पौधे (400) प्रति हैक्टर क्षेत्रफल में आते हैं। उच्च घनत्व वाली रोपण प्रणाली प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक संख्या में पौधों को समायोजित करने से रोपण के प्रारंभिक वर्षों में उच्च उपज सुनिश्चित करती है। नये प्रचलन में कम समय व खर्च में अच्छी गुणवत्ता वाली भारी फसल की मांग को देखते हुए उत्पादन प्रयोगों में पौध प्रबंधन खासकर पौधों के आकार नियंत्रण पर विशेष जोर दिया जा रहा है। भारत में पहली बार केन्द्रीय बागवानी परीक्षण केन्द्र, वेजलपुर, पंचमहल, गोधरा, में विस्तारपूर्वक जामुन पर प्रयोग किया गया। सघन प्रणाली द्वारा लगाये गए पौधों (5 मीटर × 5 मीटर) द्वारा परंपरागत तरीके से लगाये गए पौधों की अपेक्षा लगभग 3 गुना उपज सम्भव है। उपरोक्त परिणाम के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अर्धशुष्क क्षेत्रों में वर्षा आाधारित जामुन की सघन बागवानी से प्रति इकाई अधिक उत्पादन कर ज्यादा से ज्यादा उपज तथा आय प्राप्त की जा सकती है। सघन बागवानी (प्रति हैक्टर 400) जामुन की खेती करने से दसवें साल कुल उपज 130 क्विंटल और शुद्ध आय 2,00,000 रुपये तथा अंत:सस्य करने से अच्छी-खासी अतिरिक्त आय भी प्राप्त की जा सकती है। दोहरी कतार तथा कतार पद्धति अपनाकर कृषक पश्चिमी भारत में भी अच्छी आय प्राप्त कर रहे हैं।

400 ग्राम पोटाश प्रति पौधा प्रतिवर्ष देनी चाहिए। गोबर की सड़ी खाद एवं उर्वरक को जुलाई में मृदा में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए।

पलवार (मल्चिंग)

वर्षा आधारित खेती के लिए पौधे के मुख्य तने के चारों तरफ 4 वर्गमीटर में 20 सें.मी. मोटी जैविक पलवार जैसे कि मक्का या धान का पुआल, घास से वृक्ष के थाले की मृदा में केंचुए और सूक्ष्मजीवों की मात्रा बढ़ जाती है तथा मृदा की नमी बरकरार रहती है। पौधे के आसपास खरपतवार भी कम हो जाते हैं। इससे भूमि के पी-एच, ई.सी. में सुधार के साथ भूमि तापमान भी नियंत्रित रहता है।

जामुन में अंतर्वर्ती फसल

जामुन के बाग से आर्थिक लाभ 5 वर्ष के बाद मिलना प्रारंभ होता है। इसलिए कुछ ऐसी फसलें उगाते हैं, जिनसे पौधे को हानि न पहुंचे, साथ ही साथ कुछ आय भी प्राप्त होती रहे। इनमें चना, मटर, मुख्य हैं। वर्षाऋतु में लौकी व भिंडी भी लगा सकते हैं।

छाल खाने वाला कीट

फूल और फल आना

जामुन में फूल मार्च में आते हैं। कलमी पौधों में चार से पांच वर्ष बाद फूल आना प्रारंभ हो जाते हैं। जामुन में परागण मुख्यत: मधुमक्खियों द्वारा सम्पन्न होता है।

फल तुड़ाई एवं उपज

फल जून में पककर तैयार हो जाते हैं। पकने का समय अलग-अलग प्रजातियों में भिन्न-भिन्न होता है। एक विकसित पेड़ से 60-80 कि.ग्रा. फल प्राप्त होते हैं। जामुन के फल जब पेड़ पर गहरे बैंगनी रंग के हो जाएं तो सावधानीपूर्वक तुड़ाई करनी चाहिए। तुड़ाई के दौरान फल को किसी प्रकार की चोट न पहुंचे, इस बात का ध्यान रखना चाहिए।

कीट एवं रोग प्रबंधन

जामुन के फल में बहुत ही कम कीट एवं रोग दिखाई देते हैं। कीटों की समस्या से किसानों को परेशानी हो सकती है, जिसका प्रबंधन नितान्त आवश्यक है।

छाल खाने वाला कीट

यह इल्ली वृक्ष के तने और डालियों में छिद्र बनाती है और धीरे-धीरे पूरे भाग को नुकसान करती है। ग्रसित डाली सूख जाती है तथा उसके नीचे जमीन पर कीट का लकड़ी के भूसे जैसा अवशिष्ट पदार्थ देखा जा सकता है। इसके नियंत्रण के लिए छिद्रों को केरोसिन या डायक्लोरोवॉस कीटनाशी के घोल से भीगी रूई से बंद कर देना चाहिए एवं सायंकाल में डाइमेथोएट (0.05 प्रतिशत) से फूल आने के पहले छिड़काव से नियंत्रित किया जा सकता है। रोगार की 2 मि.ली. दवा को 1 लीटर पानी में मिलाकर सायंकाल में छिड़काव करने से इस कीट को नियंत्रित किया जा सकता है।

आम की पूरे वर्ष फल देने वाली 'सदाबहार' किस्म

राजस्थान में कोटा जिले के प्रयोगधर्मी किसान श्री किशन सुमन ने आम की एक ऐसी पौध तैयार की है, जिससे आम के शौकीनों को वर्षभर आम का स्वाद मिल सकेगा। कोटा शहर से महज पांच कि.मी. दूर कोटा जिले के लाड़पुरा तहसील के गिरधरपुरा गांव में सात बीघा जमीन पर खेती करने वाले श्री सुमन ने अपनी सफलता की कहानी बयां की। उन्होंने कहा कि शुरू में परम्परागत खेती करते थे, लेकिन बाद में गुलाब की खेती शुरू कर दी। आज खेत में

चार बीघा में गंगानगरी किस्म के गुलाब और तीन बीघा में मोरपंखी लगी हुई है तथा 150 से अधिक पौधे सदाबहार आम के हैं।

उन्होंने बताया कि गुलाब के पौधों में कलम करने के दौरान एक दिन मेरे दिमाग में आम के पौधों में भी कलम लगाकर कुछ नया करने का विचार आया और तब से अर्थात पिछले सात वर्ष से आम की खास किस्म तैयार करने में लगा हुआ हूं तथा इसमें काफी हद तक सफलता मिली है। फलों के राजा कहे जाने वाले आम का नाता हमारी सभ्यता से शुरू से ही रहा है। अमूमन गर्मी के सीजन में ही आम का उत्पादन होता है, लेकिन अब दिन-प्रतिदिन विज्ञान के बढ़ते कदम की वजह से आम का उत्पादन अन्य सीजनों में भी होने लगा है। भारत में इस समय 1500 से अधिक आम की किस्में पाई जाती हैं। सभी किस्म अपने आप में बेहद खास हैं।

नवंबर-दिसंबर में बागों के प्रमुख कार्यकलाप

राम रोशन शर्मा[1], हरे कृष्णा[2], स्वाति शर्मा[3] और **विजय राकेश रेड्डी[4]**

शरद ऋतु के आरंभ के साथ ही उद्यान में किए जाने वाले कृषि कार्यों का महत्व विशेष रूप से बढ़ जाता है। इस अवधि के दौरान जहां अमरूद, नीबूवर्गीय फल और बेर के पके फलों को बाजार भेजने की व्यवस्था करनी होती है, वहीं बागों में खाद का प्रयोग भी करना होता है। नवंबर से दिसंबर की द्विमाही में छोटे पौधों को पाले से बचाने की भी विशेष व्यवस्था करनी होती है। पाले की समस्या शीतोष्ण फलों की अपेक्षा उष्ण और उपोष्ण कटिबंधीय फलों विशेषकर केला, पपीता, लीची, आम इत्यादि में ज्यादा प्रबल होती है। पौधों को छप्पर लगाकर या धुआं देकर या सिंचाई करके पाले से बचाएं। इस द्विमाही में बागों में किए जाने वाले अन्य प्रमुख कृषि कार्यों के संबंध में अधिक जानकारी इस लेख में दी जा रही है।

आम

नवंबर-दिसंबर में आम के बाग में सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। भूमि की आवश्यक निराई-गुड़ाई के पश्चात हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। वृक्षों को पाले से बचाने के लिए धुआं और हल्की सिंचाई करें। नर्सरी में पौधों को पाले से बचाने के लिए उन्हें छप्पर से ढक दें। नए बाग के छोटे पौधों को पुआल से ढक दें, परंतु उन्हें पूर्व दिशा में खुला छोड़ दें, जिससे पौधों को

आम में मिलीबग से बचाव हेतु पॉलीथीन की पट्टी

उचित मात्रा में प्रकाश तथा हवा प्राप्त हो सके। वृक्षों को मिलीबग के प्रकोप से बचाने के लिए उद्यान की जुताई करनी चाहिए, ताकि इन कीटों के अंडे और प्यूपा नष्ट हो जाएं। मिलीबग कीट को वृक्षों पर चढ़ने से रोकने के लिए 30-45 सें.मी. चौड़ी एल्काथेन पॉलीथीन को जमीन से 40-60 सें.मी. ऊपर तने पर बांधना चाहिए। पॉलीथीन को बांधने से पहले छाल के सभी छिद्रों और दरारों को मिट्टी से पलस्तर कर देना चाहिए अन्यथा कीट उन दरारों से होकर वृक्षों पर चढ़ सकते हैं। जब निम्फ वृक्ष पर चढ़ चुके हों, उस अवस्था में वहां कार्बेरिल (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

दिसंबर में 10 वर्ष से ज्यादा आयु के वृक्षों में 1500 ग्राम फॉस्फोरस तथा 1000

[1]खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012; [2,3]भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221005 (उत्तर प्रदेश); [4]भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी अनुसंधान संस्थान, बीछवाल, बीकानेर-334006 (राजस्थान)

ग्राम पोटाश प्रति वृक्ष की दर से दें। इसके साथ ही गोबर की सड़ी खाद (30 से 40 कि.ग्रा./वृक्ष) का प्रयोग अवश्य करें।

अमरूद

नवंबर में अमरूद के बागों में निराई-गुड़ाई और सिंचाई की व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके साथ ही नवंबर-दिसंबर में, गोबर की सड़ी-गली खाद को रासायनिक उर्वरकों जैसे सिंगल सुपर फॉस्फेट (एसएसपी) और म्यूरेट ऑफ पोटाश (एमओपी) के साथ दिया जाना चाहिए। यूरिया की आधी मात्रा भी नवंबर

बाजार के लिए तैयार अमरूद

माह में देनी चाहिए, जबकि शेष आधी मात्रा जुलाई में देनी चाहिए। छह वर्ष के पौधे को, सामान्यत: 60 कि.ग्रा. गोबर की खाद, एक कि.ग्रा. यूरिया, 2.5 कि.ग्रा. एसएसपी और आधा कि.ग्रा. एमओपी दिया जा सकता है। 75 ग्राम नाइट्रोजन, 65 ग्राम फॉस्फोरस, 50 ग्राम पोटेशियम प्रति वृक्ष प्रतिवर्ष की दर से भी दिया जा सकता है। यह भी ध्यान देना आवश्यक है कि उर्वरकों की मात्रा केवल मृदा परीक्षण के आधार पर ही हो, क्योंकि अमरूद की पोषी जड़ 25 सें.मी. गहराई तक मिट्टी की सतह में पाई जाती है। उर्वरकों के बेहतर उपयोग के लिए उन्हें पेड़ के तने से एक मीटर की दूरी पर 25 सें.मी. गहराई में दिया जाना चाहिए।

नवंबर-दिसंबर में वृक्षों तथा छोटे पौधों को पाले से बचाने की व्यवस्था करनी चाहिए। छाल खाने वाले कीट की रोकथाम डाइक्लोरोवॉस एक मि.ली. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिद्रों में भरकर चिकनी मिट्टी से लेप कर दें। तैयार पके फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। स्टूलिंग विधि से पौधे तैयार करने के लिए 2-3 वर्ष के पौधों को जमीन से 4-5 इंच ऊंचाई पर काट दें, जिससे उनमें अगली तिमाही में फुटाव आयेगा।

लीची

नवंबर-दिसंबर में लीची में पुष्पन आरंभ हो जाता है। इस अवधि में उद्यान में नमी की उचित मात्रा को बनाए रखना आवश्यक है। लीची में 'मिलीबग' की रोकथाम के लिए प्रति वृक्ष 250 ग्राम मिथाइल पैराथियान का बुरकाव पेड़ के एक मीटर के घेरे में कर दें। फिर पेड़ के तने पर जमीन से 30-40 सें.मी. की ऊंचाई पर 400 गेज वाली एल्काथीन की 30 सें.मी. चौड़ी पट्टी सुतली आदि से कसकर बांध दें। उसके दोनों सिरों पर गीली मिट्टी या ग्रीस से लेपकर दें, पेड़ पर मिलीबग का प्रकोप नहीं होगा। दिसंबर में गोबर की अच्छी तरह से सड़ी खाद (25 से 30 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष) का उद्यान में प्रयोग करें।

लीची में भरपूर पुष्पन

आंवला

विभिन्न क्षेत्रों में, आंवला के फलों की तुड़ाई नवंबर-फरवरी के बीच होती है। अत: जिन क्षेत्रों में इसकी तुड़ाई का कार्य नवंबर-दिसंबर में हो, उन क्षेत्रों में इस दौरान फलों से लदे वृक्षों को बांस-बल्ली की सहायता से सहारा देने की व्यवस्था की जानी चाहिए, ताकि शाखाओं को टूटने से रोका जा सके। इस दौरान फलों का भी विकास होता है, अत: सिंचाई की भी समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। ध्यान रहे कि तुड़ाई से 15 दिनों पूर्व सिंचाई रोक दी जाए ताकि फल समय से तैयार हो सकें।

दीमक से बचाव के लिए फोरेट 10 जी प्रति पौधा 25-30 ग्राम डालकर मृदा में मिला दें। शूटगॉल कीट से ग्रस्त टहनियों को काटकर जला दें एवं पेड़ों पर डाइमेथोएट 2 मि.ली. एवं मैंकोजेब 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। फलों के झड़ने की समस्या होने पर बोरेक्स (0.6 प्रतिशत) का छिड़काव करें।

दिसंबर में फल गलन की समस्या होने पर ब्लाइटॉक्स (3 ग्राम/लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। पके फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था भी करें।

केला

नवंबर-दिसंबर में केले में प्रति पौधा 55 ग्राम यूरिया का प्रयोग करें तथा 10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करें। पर्णचित्ती एवं फल सड़न रोग के लिए 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति लीटर की दर से छिड़काव करें। 15

पालाग्रसित केले का बाग

दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई अवश्य करें। केला पाले के प्रति बहुत संवेदनशील होता है। दिसंबर में पौधों को पाले से बचाने की विशेष व्यवस्था करें। इसके लिए उद्यान में रात के समय धुआं करें एवं समय-समय पर हल्की सिंचाई करते रहें।

बेर

नवंबर और दिसंबर में बेर में फलमक्खी का प्रकोप ज्यादा होता है। ये विकसित हो रहे फलों में अंडे देती हैं। प्रभावित फलों

बेर की फल-मक्खी

को तोड़कर नष्ट कर देना चाहिए तथा फलमक्खी की रोकथाम के लिए डाइमेक्रॉन (1.5 ग्राम/लीटर) के घोल का छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त बागों में 4-5 जगहों पर युग्नाल+मेलाथियान+गुड़ का घोल बनाकर खुले बर्तनों में रखें। फलमक्खियां इस घोल की ओर आकर्षित होती हैं और खाकर मर जाती हैं। तनाछेदक कीट का प्रकोप होने की अवस्था में रूई को पेट्रोल से भिगोकर कीटों द्वारा तने में बनाए गए छिद्रों को भर दें। इसके पश्चात इसे मिट्टी से बंद कर दें, ताकि कीट उसी में मर जाएं। बेर में फलों का झड़ना भी एक प्रमुख समस्या है, जिसकी रोकथाम के लिए 2, 4 डी (10-15 पी.पी.एम.) का छिड़काव लाभदायक है। इन रसायनों के छिड़काव से फलों के झड़ने में अभूतपूर्व कमी होती है। एक छिड़काव सितंबर या अक्टूबर में करें। जब वृक्ष पर फूल पूरी तरह से आ जाएं तथा दूसरा छिड़काव प्रथम छिड़काव के एक माह पश्चात करें।

अनन्नास

नवंबर-दिसंबर में फसल निर्धारण के लिए पौधों की पत्तियों में शाम के समय 25 पीपीएम नेफ्थेलिन एसिटिक अम्ल का घोल डालें। तैयार फलों की तुड़ाई कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें। अनन्नास में रोग या कीट से ग्रस्त भागों और पौधों को इकट्ठा करके नष्ट कर देना चाहिए। घास-पात को हटाएं एवं बागों में पलवार का प्रबंध करें। इससे मृदा में पर्याप्त नमी बनी रहेगी एवं खरपतवार भी नियंत्रित रहेंगे। अक्टूबर में अनन्नास फसल के अवशेषों को निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें। पौधे की आयु के अनुसार फॉस्फोरस और पोटाश दें। कीट एवं रोगों से बचाने के लिए 2 प्रतिशत नीम के तेल का छिड़काव करें। जिन फसलों में कीट तथा रोग कम लगते हैं, उन्हें बाग की सीमा के पास लगाएं।

अनार

इस द्विमाही में अनार में बैक्टीरियल ब्लाइट, कवक रोगों और हानिकारक कीटों से बचने के लिए स्ट्रैप्टोसाइक्लिन (0.5 ग्राम/लीटर जल में) + मेंकोजेब 75 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण (2 ग्राम/लीटर जल में) में टीपोल या ट्वीन 20 (0.5 मि.ली. प्रति लीटर की दर से) का छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त बोर्डो मिश्रण (0.5 प्रतिशत) तथा ब्रोनोपोल (0.5 ग्राम प्रति लीटर जल में) + कैप्टॉन 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण (2 ग्राम/लीटर जल में) का पांच से सात दिनों के अंतराल पर छिड़काव भी लाभकारी होता है। मृदा की स्थिति, प्रकार, पौधे की आयु एवं अवस्था तथा मौसम की स्थिति के अनुसार सिंचाई करें।

अनार में बैक्टीरियल ब्लाइट

खजूर

नवंबर-दिसंबर में खजूर के बागों में कोई विशेष कार्य नहीं किया जाता है। इस दौरान, 15 दिनों के अंतराल पर वृक्षों की सिंचाई की जानी चाहिए। यद्यपि खजूर में इस दौरान कोई व्याधि नहीं होती है, फिर भी यदि किसी व्याधि अथवा कीट का प्रकोप हो तो उसकी निगरानी की जानी चाहिए ताकि समय पर उचित प्रबंधन किया जा सके।

लोकाट

नवंबर में लोकाट में फूल आते हैं, अत: इस दौरान बागों में सिंचाई नहीं की जानी चाहिए। दिसंबर में फल लगने शुरू होने के बाद 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की जानी चाहिए ताकि फलों का विकास हो सके। नवंबर माह में ही पॉलीथीन की चादरों की पलवार लगानी चाहिए, ताकि भूमि की नमी को संरक्षित किया जा सके।

पपीता

पपीते में ड्रिप सिंचाई

पिछले माह लगाए गए पौधों की सिंचाई करनी चाहिए। उद्यान की सफाई करके खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। नवंबर के पहले और तीसरे हफ्ते में हल्की सिंचाई करने के पश्चात उद्यान में निराई-गुड़ाई करें। दिसंबर में फॉस्फोरस तथा पोटाशयुक्त उर्वरक को मृदा में भलीभांति मिलाएं तथा गोबर की सड़ी हुई खाद का अच्छी तरह से प्रयोग करें। पौधों को पाले से बचाने के लिए उद्यान में धुआं करें एवं पौधों को पुआल या पॉलीथीन से ढकने की व्यवस्था करें।

फलों से लदी लोकाट की टहनी

नीबूवर्गीय फल

नवंबर-दिसंबर में बहुत से नीबूवर्गीय फल तुड़ाई के लिए तैयार होना शुरू हो जाते हैं। इसी समय फलों का तुड़ाई पूर्व गिरना एक गंभीर समस्या है। फलों के गिरने से रोकने के लिए 10 पी.पी.एम. 2,4-डी (एक ग्राम प्रति 100 लीटर पानी) का छिड़काव अवश्य करें। दिसंबर में नीबूवर्गीय फलों में गोंदार्ति रोग की आशंका बढ़ जाती है। इसकी

संतरे में लगा गोंदार्ति रोग

रोकथाम के लिए तने के प्रभावित हिस्से वाली छाल को खुरचकर निकाल दें। तदोपरांत बोर्डो लेप (1:2:20) का प्रयोग खुरचे भाग एवं इसके चारों ओर के स्वस्थ भाग पर करना चाहिए। दिसंबर में तैयार फलों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करें।

सेब

नवंबर में उद्यान की सफाई कर निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए। दिसंबर में नए बाग लगाने के लिए गड्ढों को प्रथम सप्ताह तक भर देना चाहिए। निचले पहाड़ी इलाकों

शीत ऋतु में सेब के बाग का आकर्षक दृश्य

स्ट्रॉबेरी

खेत तैयार करने से पहले 40-50 टन प्रति हैक्टर की दर से गोबर की गली-सड़ी खाद डाल दें। इसके बाद खेत की जुताई करें। बाग लगाने के लिए 10 × 3 × 0.5 फुट आकार की क्यारियां तैयार कर लें। अक्टूबर के अंत या नवंबर के शुरू में उद्यान में स्ट्रॉबेरी के पौधों की रोपाई करें। नवंबर में रोपित पौधों से फुटाव शुरू हो जाएगा। फुटाव शुरू होने पर बाग की निराई-गुड़ाई करके खरपतवार आदि निकाल दें। पौधों में जब 4-5 पत्तियां आ जाएं तो नाइट्रोजन की प्रथम मात्रा का प्रयोग करना चाहिए।

दिसंबर में पत्तियों का धब्बा रोग दिखने पर डाइथेन एम-45 (2 ग्राम/लीटर पानी में) या बाविस्टिन (एक ग्राम/लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें। यदि संभव हो तो क्यारियों पर पॉलीथीन का टैंट लगा दें, ताकि पौधों की अच्छी बढ़त हो। दिसंबर में नाइट्रोजन व पोटाश की शेष मात्रा अवश्य दें।

नियमित अंतराल पर सिंचाई करते रहें। पौधों में पलवार (मल्चिंग) की भी उचित व्यवस्था करें। मल्चिंग के लिए सुविधानुसार पुआल, पौधों की पत्तियों, पॉलीथीन आदि का प्रयोग करें।

में जहां ठंड ज्यादा नहीं रहती है, जाड़ों में इसकी रोपाई इस माह के अंत तक कर सकते हैं। अच्छी फसल के लिए उद्यान में 2-3 किस्मों का होना आवश्यक है। अधिक ठंड वाले क्षेत्रों में इसी माह पौधों की काट-छांट का कार्य भी करें। इसके बाद कटे हुए भाग पर चौबटिया लेप लगा दें। चौबटिया लेप कॉपर-कार्बोनेट, रेड लेड और अलसी के तेल को 4:4:6 के अनुपात में मिलाकर तैयार कर सकते हैं। तना सड़न रोग की रोकथाम के लिए डायथेन एम-45 अथवा बाविस्टिन के घोल का तने के चारों ओर छिड़काव करें। सेंजोस स्केल कीट की रोकथाम के लिए हिन्दुस्तान पेट्रोलियम, स्प्रे ऑयल अथवा एग्रो स्प्रे ऑयल का छिड़काव दिसंबर में अवश्य करें।

आड़ू, खुबानी, आलूबुखारा

नबंबर में पौधों को पर्ण कुंचन और माहूं से बचाने के लिए 200 मि.ली. रोगार 30 ई.सी. के घोल का 4-8 लीटर/वृक्ष की दर से छिड़काव करें। दिसंबर में नए बाग लगाने के लिए गड्ढों को भर देना चाहिए। गड्ढा भरने के लिए गोबर की खाद 15 से 20 कि.ग्रा./गड्ढा तथा फॉस्फोरसयुक्त उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। इसी माह पौधों की काट-छांट का कार्य भी करें। जड़छेदक कीट से बचाव के लिए क्लोरपाइरीफॉस का प्रयोग करें। तराई और मैदानी क्षेत्रों में आड़ू की रोपाई का कार्य दिसंबर के अंत तक समाप्त कर लें।

सेब में आदर्श सधाई प्रणाली

अंगूर

नबंबर में अंगूर के बाग की सफाई कर इसे खरपतवार मुक्त रखें। हल्की सिंचाई के बाद निराई-गुड़ाई अवश्य करें। दिसंबर नए उद्यान लगाने के लिए अच्छा होता है। इस माह के अंतिम सप्ताह में एक वर्ष पुरानी जड़ सहित लताओं को गड्ढों के बीच में लगाकर सिंचाई करनी चाहिए। रोपाई के बाद नीचे से 15 सें.मी. की ऊंचाई से पौधों को छांटना चाहिए। दिसंबर में अंगूर की लताएं सुषुप्तावस्था में आ जाती हैं। इस अवस्था में लताओं से पत्तियां पीली होकर झड़ जाती हैं। इसी अवस्था में अंगूर की कटाई-छंटाई का कार्य किया जा सकता है।

भाकृअनुप
ICAR

DIRECTORATE OF KNOWLEDGE MANAGEMENT IN AGRICULTURE

HANDBOOKS OF ICAR

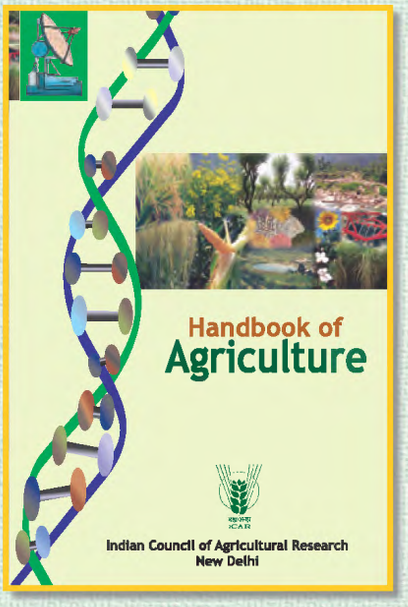

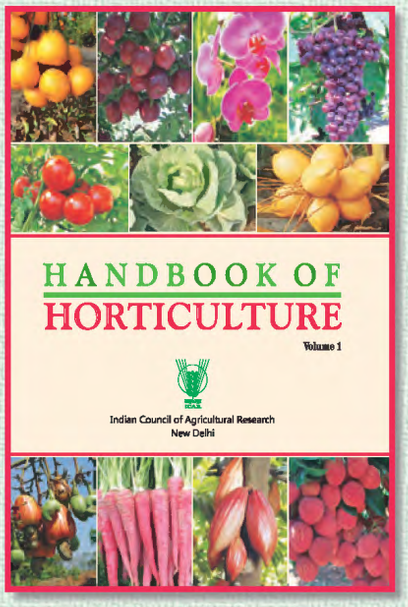

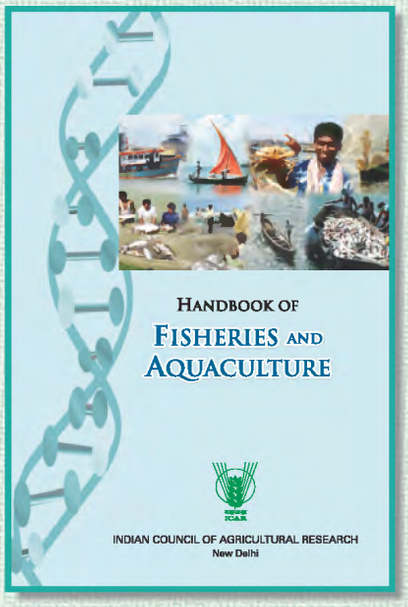

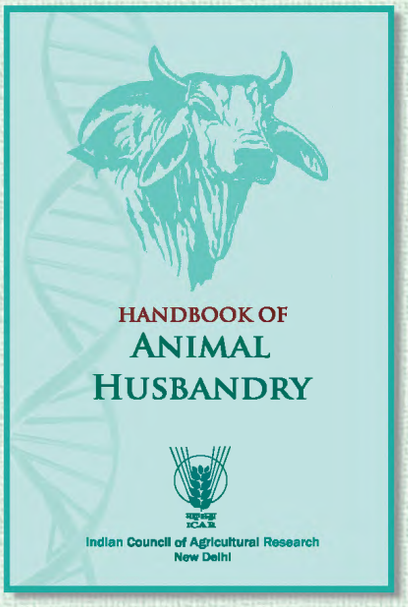

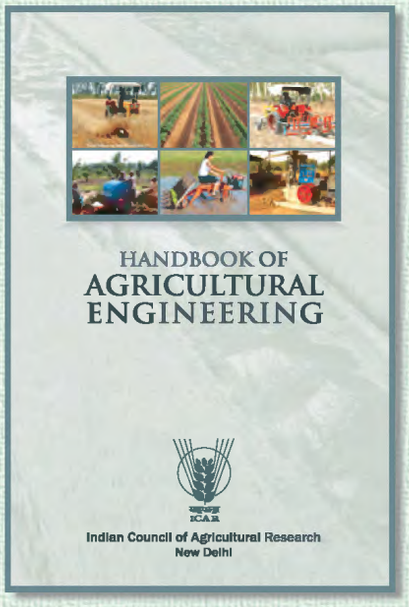

For obtaining copies, please contact:

Business Manager

Directorate of Knowledge Management in Agriculture

Krishi Anusandhan Bhavan-I, Pusa, New Delhi 110 012

Tel : 011-25843657, Fax 91-11-25841282; e-mail : bmicar@gmail.com

www.icar.org.in

देश में पैदा होगी लाल भिंडी

भिंडी, प्रमुख सब्जियों में से एक है। इसे देश में वर्ष भर उगाया जाता है। कच्ची भिंडी को जहां सब्जी के रूप में घरों में प्रयोग किया जाता है वहीं, इसकी जड़ों एवं तनों को गुड़ तथा शक्कर को साफ करने के लिए उपयोग में लाया जाता है। विश्व के कुछ देशों में भिंडी के बीजों का पाउडर बनाकर कॉफी के रूप में भी इस्तेमाल होता है। भिंडी में प्रोटीन, कैल्शियम व अन्य खनिज लवण पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं। यह आयोडीन का भी एक प्रमुख स्रोत है। अभी तक देश में हरे रंग की भिंडी की खेती की जाती थी, लेकिन अब आने वाले समय में लाल रंग की भिंडी की खेती भी किसान कर सकेंगे। सामान्यत: भिंडी देश के सभी भागों में उगाई जाती है, पर पश्चिम बंगाल, बिहार, ओडिशा, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, गुजरात, राजस्थान और असोम प्रमुख भिंडी उत्पादक राज्य हैं। यह विदेशी मुद्रा कमाने में भी यह एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यदि इसकी खेती वैज्ञानिक ढंग से की जाए तो यह लाभदायक व्यवसाय साबित हो सकती है।

भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी ने भिंडी की नई प्रजाति **'काशी लालिमा'** विकसित करने में सफलता हासिल की है। इसकी सबसे खास बात है कि यह भिंडी हरी होने की बजाय लाल रंग की है और इसी कारण इसका नाम *'काशी लालिमा'* रखा गया है। यहां के वैज्ञानिकों के अनुसार एंथोसायनीन तत्व की प्रमुखता के कारण इसका रंग लाल है। इसमें आयरन 51.3 पीपीएम, जिंक 49.7 पीपीएम और कैल्शियम 475 पीपीएम है। इसकी लंबाई 11-14 सें.मी. और व्यास 1.5-1.6 सें.मी. होता है।

भिंडी की यह किस्म एंटीऑक्सीडेंट, आयरन और कैल्शियम समेत अन्य पोषक तत्वों से भरपूर है। वैज्ञानिकों के अनुसार यह प्रजाति जायद एवं खरीफ दोनों मौसमों में खेती के लिए उपयुक्त है।

लाल रंग की भिंडी अभी तक पश्चिमी देशों में प्रचलन में है और वहीं से आयात होकर भारत आ रही है। इसकी विभिन्न किस्मों की कीमत 100 से 500 रुपये प्रति कि.ग्रा. तक है। अब *काशी लालिमा* की खेती जल्द ही भारतीय किसान की कर सकेंगे। भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान द्वारा इसी वर्ष दिसंबर में इस किस्म के बीज आम लोगों के लिए उपलब्ध कराए जाएंगे। पोषक तत्वों से भरपूर भिंडी की इस किस्म के उत्पादन से न केवल भारतीय किसानों को फायदा होगा, बल्कि आम लोगों को भी पोषण का बेहतर विकल्प मिलेगा।

देश-विदेश में लाल भिंडी की बढ़ती मांग

एक हैक्टर में 150 क्विंटल पैदावार

लाल भिंडी के प्रति पौधे में 20-22 फल देने की क्षमता है। इस किस्म में बुआई के 45 दिनों बाद ही फल तुड़ाई शुरू हो जाती है। इसकी प्रति हैक्टर पैदावार 150 क्विंटल तक है। वर्तमान में भारत में सब्जी के रूप में हरी भिंडी ही प्रचलन में है। लाल रंग की भिंडी पश्चिमी देशों में ज्यादा प्रचलित है और भारत द्वारा भी वहीं से अपने उपयोग के लिए यह आयात की जाती है। अब देश में इसकी किस्म विकसित हो जाने से इसको आयात करने की जरूरत नहीं पड़ेगी। यहां के किसानों को इसकी खेती करके भारी मुनाफा होने की उम्मीद है। लाल रंग की भिंडी की बाजार में काफी मांग है और यह महंगे दामों पर बिकती है।

भारत, विश्व का सबसे बड़ा भिंडी उत्पादक देश है। यहां पर कुल सब्जी उत्पादन क्षेत्रफल में 4.9 प्रतिशत भूभाग यानी 0.514 मिलियन हैक्टर भूमि पर भिंडी की खेती की जाती है। इससे कुल 6,126 मिलियन टन भिंडी का उत्पादन प्राप्त होता है।

भिंडी में विटमिन 'ए' और बीटा कैरोटिन जैसे सबसे अहम पोषक तत्व पाए जाते हैं और ये दोनों ही आंखों की रोशनी के लिए काफी फायदेमंद होते हैं। ये दोनों तत्व आंखों को मोतियाबिंद और दूसरे रोगों से बचाने में मदद करते हैं। शरीर में कोलेस्ट्रॉल की अधिक मात्रा हो जाने की वजह से दिल से जुड़े रोगों का खतरा बढ़ जाता है, ऐसे में भिंडी में मौजूद पेक्टिन नामक तत्व कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित करने में मदद करता है। इससे दिल से जुड़े रोगों का खतरा कम हो जाता है।

बेहद पौष्टिक है लाल भिंडी

स्वाद और सेहत के लिए भिंडी का उपयोग

भिंडी स्वाद के साथ-साथ स्वास्थ्य के लिए भी बहुत उपयोगी है। डायबिटीज के मरीजों को अपने भोजन में भिंडी को जरूर शामिल करना चाहिए। विभिन्न वैज्ञानिक शोधों के अनुसार भिंडी में अघुलनशील रेशों की मात्रा बहुत अधिक होती है। ऐसे में ये रेशे आंतों द्वारा जिस दर से शुगर को पचाया जाता जाता है, उसमें कमी ला सकता है। भिंडी सेहत के लिए कितनी अच्छी है, इसका अंदाजा आप इसी बात से लगा सकते हैं कि टर्की जैसे देशों में तो भिंडी के बीज का इस्तेमाल डायबिटीज के मरीजों की दवा बनाने में भी किया जाता है।

भिंडी में विटामिन 'ए', विटामिन 'सी', कैल्शियम और फॉलेट होता है, जो त्वचा में चमक लाकर उसको स्वस्थ बनाता है। उलझे और टूटते बालों से भी भिंडी निजात दिलाती है। बालों को स्वस्थ, लंबा और चमकदार बनाने के लिए इसको कंडिशनर के तौर पर इस्तेमाल किया जाता है।

प्रस्तुति: अश्विनी कुमार निगम

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)-437

New Arrival 2019 Edition

HANDBOOK OF HORTICULTURE

VOLUME 1 & 2

HANDBOOK OF HORTICULTURE

Volume 1 & 2

The Indian Council of Agricultural Research has brought out the Second enlarged and revised edition of the Handbook of Horticulture. Horticultural crops are gaining more and more importance as they have been instrumental in improving the economic condition of the farmer and contributing significantly to the national GDP. This new revised edition has been divided into 2 volumes – Volume 1 contains General Horticulture and Production Technologies (Fruit, Vegetable and Tuber crops) and Volume 2 has Production Technologies (Flower, Plantation, Spices crops and Medicinal and aromatic plants), Plant Protection and Post-harvest Management. The earlier chapters have been thoroughly revised and new chapters have been added. It is hoped that the readers will find this Second edition more useful and informative.

Technical Specifications

Pages: i-xxxiv + 1-682 (Vol. 1)
i-xxiii + 683-1218 (Vol. 2)
Price: ₹2000/- (Vol.1 & 2) Postage ₹200/-
ISBN: 978-81-7164-187-1

Copies available from:

Business Manager
Directorate of Knowledge Management in Agriculture (DKMA)
Indian Council of Agricultural Research
Krishi Anusandhan Bhavan, Pusa, New Delhi 110012
Tele: 011-25843657; e-mail: bmicar@icar.org.in, businessuniticar@gmail.com

डा. एस. के. सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादक: अशोक सिंह